चन्दामामा

सितम्बर १९६५

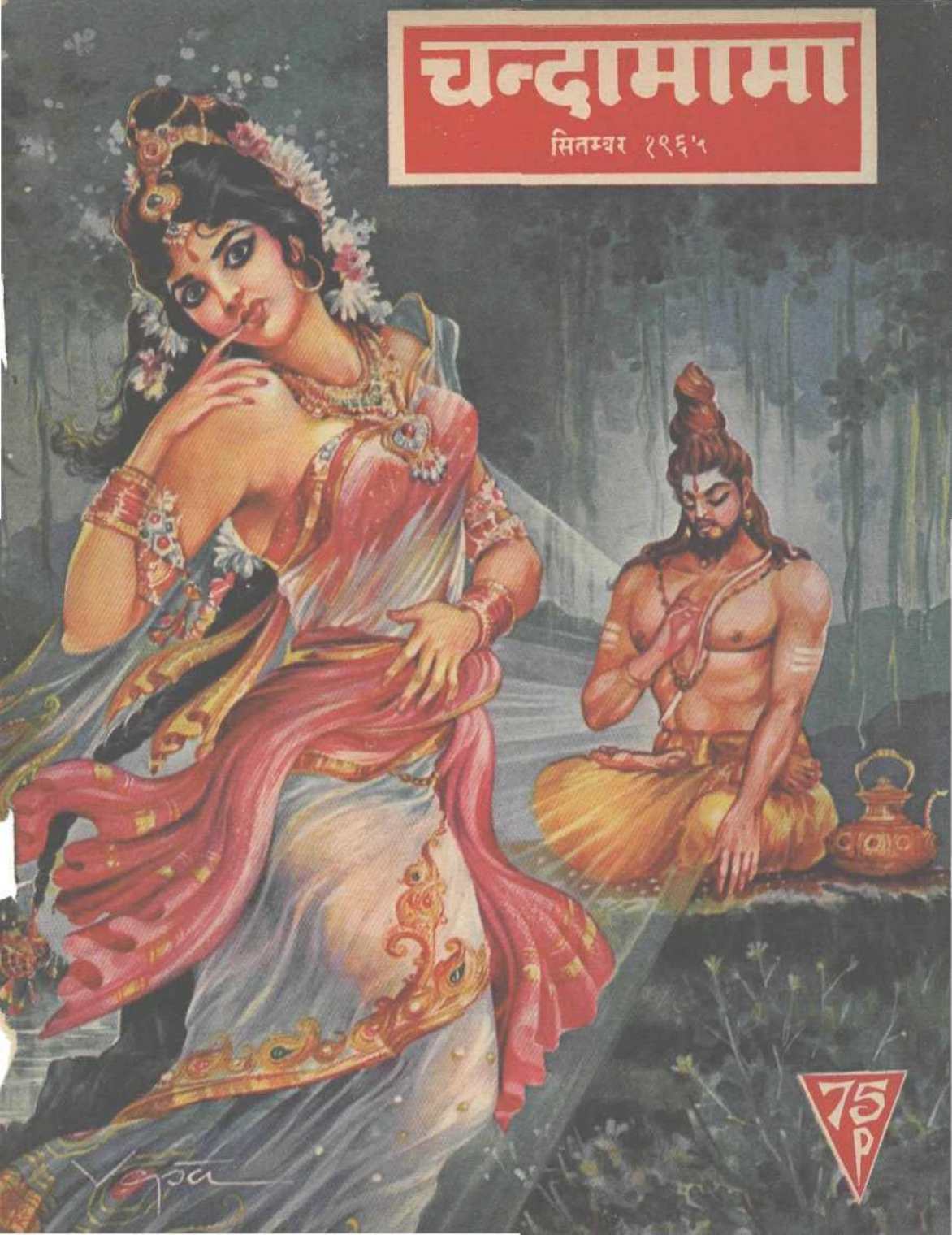

75 P

For the first time in India the revolutionery electronic engraving machine in action

VARIO KLISCHO GRAPH

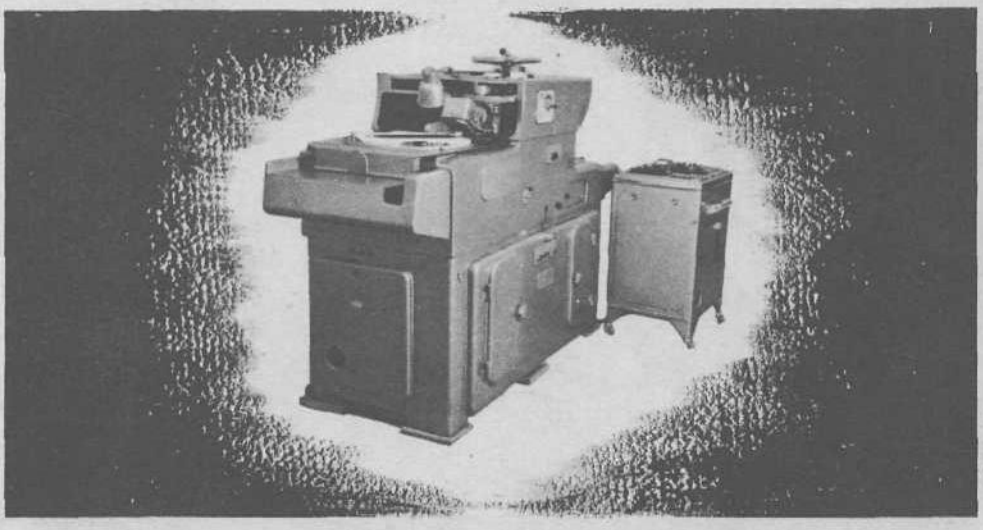

WHAT IT MEANS TO YOU

Block making time reduced from days to a few hours ■ Electronic control of gradation and detail sharpness ■ Electronic adjustment of colour correction

CHANDAMAMA PRESS - CHANDAMAMA BUILDINGS - MADRAS-26

दुधमुँहे
बच्चों के लिये
डाबर
की नई देन....

डाबर
जन्मघूँटी

डाबर
(डा० एस० के० बर्म्मन) प्राइवेट लि०,
कलकत्ता-२९

चन्दामामा

सितम्बर १९६५

★

विषय - सूची

संपादकीय	१	चोर के पीछे चोर	३३
भारत का इतिहास	२	अभियुक्त	४०
नेहरू की कथा	५	सत्यवादी	४३
नवाब नन्दिनी (धारावाहिक)	९	उत्तरकाण्ड (रामायण)	४९
विष्णू की माया	१७	शुम्भ निशुम्भ	५७
तारावलोक	२२	संसार के आश्चर्य	६१
राज्य लोभी	२७	फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता	६४

★

विक्स वेपोरब तुरन्त आराम पहुंचाता है...
आपका बच्चा आसानी से सांस ले सकता है...वह रात भर आराम से सो सकता है।

आपके बच्चे की सुख-सुविधा आप पर ही निर्भर है। इस लिए जब आपके बच्चे में सर्दी-ज़ुकाम के आरम्भिक लक्षण दिखायी दें, जैसे नाक का बहना, आंखों से पानी गिरना, गले का बैठ जाना, सांस लेने में तकलीफ, तो विक्स वेपोरब मलिये।

विक्स वेपोरब आपके बच्चे के सर्दी-ज़ुकाम का सर्वोत्तम इलाज है क्योंकि यह सर्दी से प्रभावित उन सभी भागोंपर, जैसे नाक, छाती और गले में, जहां सर्दी की पीड़ा सबसे ज़्यादा होती है, असर करता है और आपके बच्चे की कोमल त्वचा को इससे तनिक भी क्षति नहीं पहुंचती।

बस विक्स वेपोरब मलिये और अपने बच्चे को कम्बल ओढ़ा कर आराम से बिस्तरपर सुला दीजिये। विक्स वेपोरब अपना काम करता रहेगा। जबकि आपका बच्चा रात भर चैन की नींद सोता रहेगा। सुबह तक सर्दी-ज़ुकाम की पीड़ा जाती रहेगी और आपका लाडला मुन्ना स्वस्थ और हंसता-खेलता उठेगा।

विक्स वेपोरब ३ साइज़ में

चन्दामामा

नवम्बर का अंक

सभी भाषाओं में दीपावली विशेषांक होगा....

★ अधिक पृष्ठ।
★ नई मनोरंजक कहानियाँ।
★ आकर्षक वॉशकलर के चित्र।
★ सुशोभित नये ढँग में रंगीन मुख-चित्र।
यह अंक अत्यंत मनोहर दिखाई देगा।

★

इस अंक का दाम १ रुपया

पाठक अपनी प्रति के बारे में पहिले
ही एजन्ट को कृपया सूचना दें।

★

आप अपनी पसन्द के माध्यम द्वारा अपनी बिक्री
का संदेश प्रत्येक परिवार को भेज सकते हैं।

★

विवरण के लिए लिखिए:

चन्दामामा पब्लिकेशन्स

वडपलनी :: मद्रास-२६

बच्चों के लिए अनुपम मौज एवरेस्ट टाईनी टोट

चपल बच्चों को अपनी पसंद की खाने या पीने की सामग्री, ठंडी या गरम, स्कूल ले जाने के लिए बनाया हुआ "टाईनी टोट" एवरेस्ट वेक्युम फ्लास्क की सभी वैशिष्ट्य एवं सामग्री से युक्त है।

अपने बच्चों के लिए खास बना हुआ "टाईनी टोट" क्या आप उसे नहीं दिलाएंगे? उनकी अनूठी प्रतिभा के विकास में गौरवपूर्ण "टाईनी टोट" विशेष सहयोग देगा। आज के बच्चे कल के नागरिक हैं।

EVEREST

Tiny Tot

MODEL
TINY TOT
Capacity : 250 cc

विक्टरी फ्लास्क कम्पनी प्रा० लि०

बम्बई ★ कलकत्ता ★ दिल्ली ★ मद्रास

Vspl-6/63

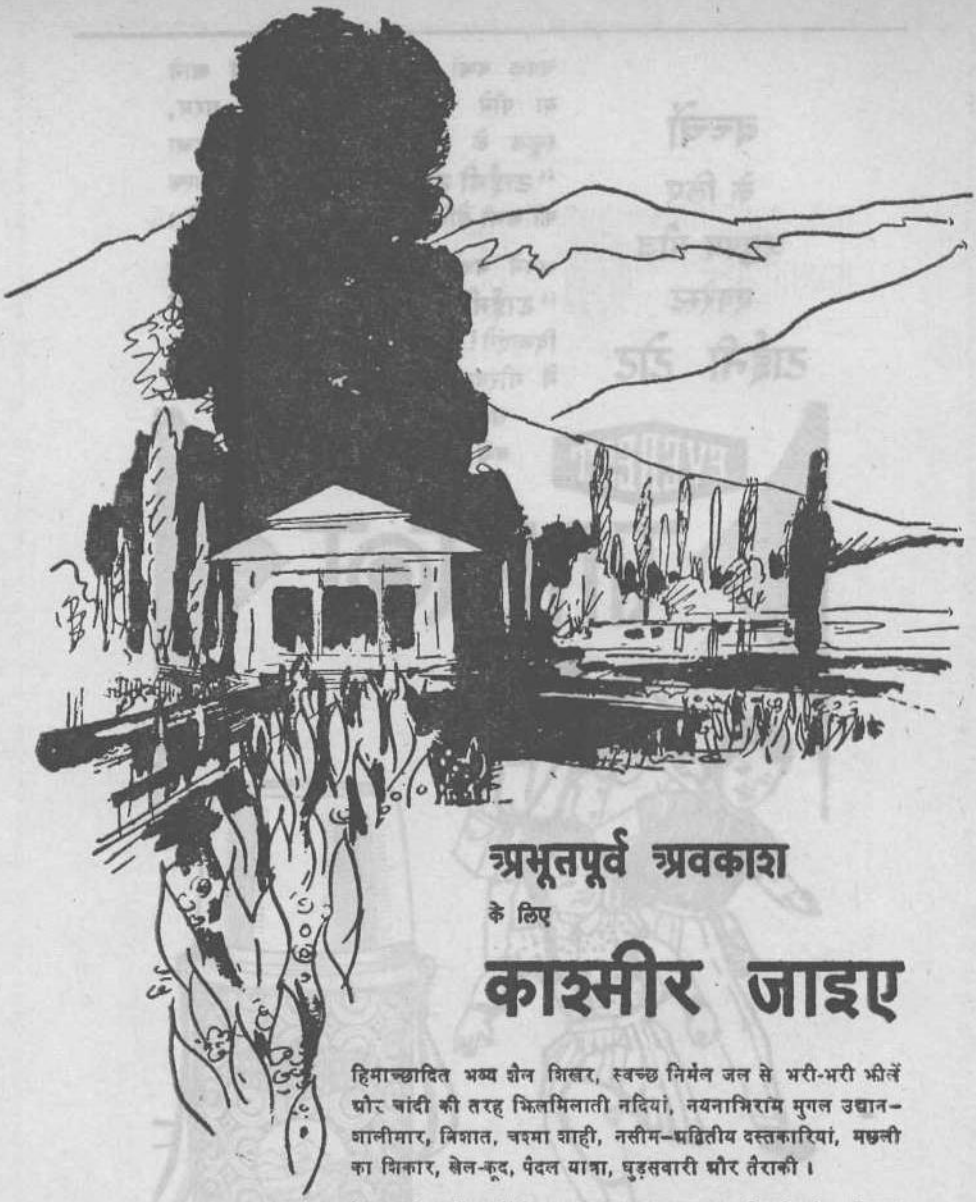

अभूतपूर्व अवकाश

के लिए

काश्मीर जाइए

हिमाच्छादित भव्य शैल शिखर, स्वच्छ निर्मल जल से भरी-भरी झीलें और चांदी की तरह झिलमिलाती नदियां, नयनाभिराम मुगल उद्यान–शालीमार, निशात, चश्मा शाही, नसीम–अद्वितीय दस्तकारियां, मछली का शिकार, खेल-कूद, पैदल यात्रा, घुड़सवारी और तैराकी।

रेल व मोटर किरायों में ३१ अक्तूबर तक छूट। दिल्ली और श्रीनगर के बीच रोजाना दो उड़ानें। हाउस बोटों में ठहरिए। उनका किराया उतना नहीं है, जितना कि आप सोचते हैं। श्रीनगर स्थित जम्मू व काश्मीर के पर्यटन निदेशक आपकी छुट्टियों की योजनायें बनाने में सहर्ष मदद करेंगे।

पर्यटन विभाग, भारत सरकार

डी.ए. ६५/१३४

साठे

बिस्कुट

इतने स्वादिष्ट कि बस पूछिए ही नहीं !

गृहतुल्य निवास और स्वादिष्ट भोजन के लिए

न्यू माड़र्न होटल

शाकाहारी - बोर्डिन्ग - लाज्ड़िग - रेस्टोरेंट

डायगनल रोड़, विश्वेश्वरपुरं, बेन्गलोर - ४.

(मिनर्वा सर्कल के समीप)

कमरे सुन्दर रूप से सज्जित, दिन रात बहता ठंड़ा और गरम पानी

डिन्नर और टी पार्टी के लिए विशेष कमरे भी हैं ।

फोन: ७२८४९ और २७६६०

मोहक सौंदर्य के लिये

Kashmir

नेशनल का

काश्मीर स्नो

चित्र तारिकाओं

का प्रिय

दी नेशनल ट्रेडिंग कंपनी, बम्बई - २ ★ मद्रास

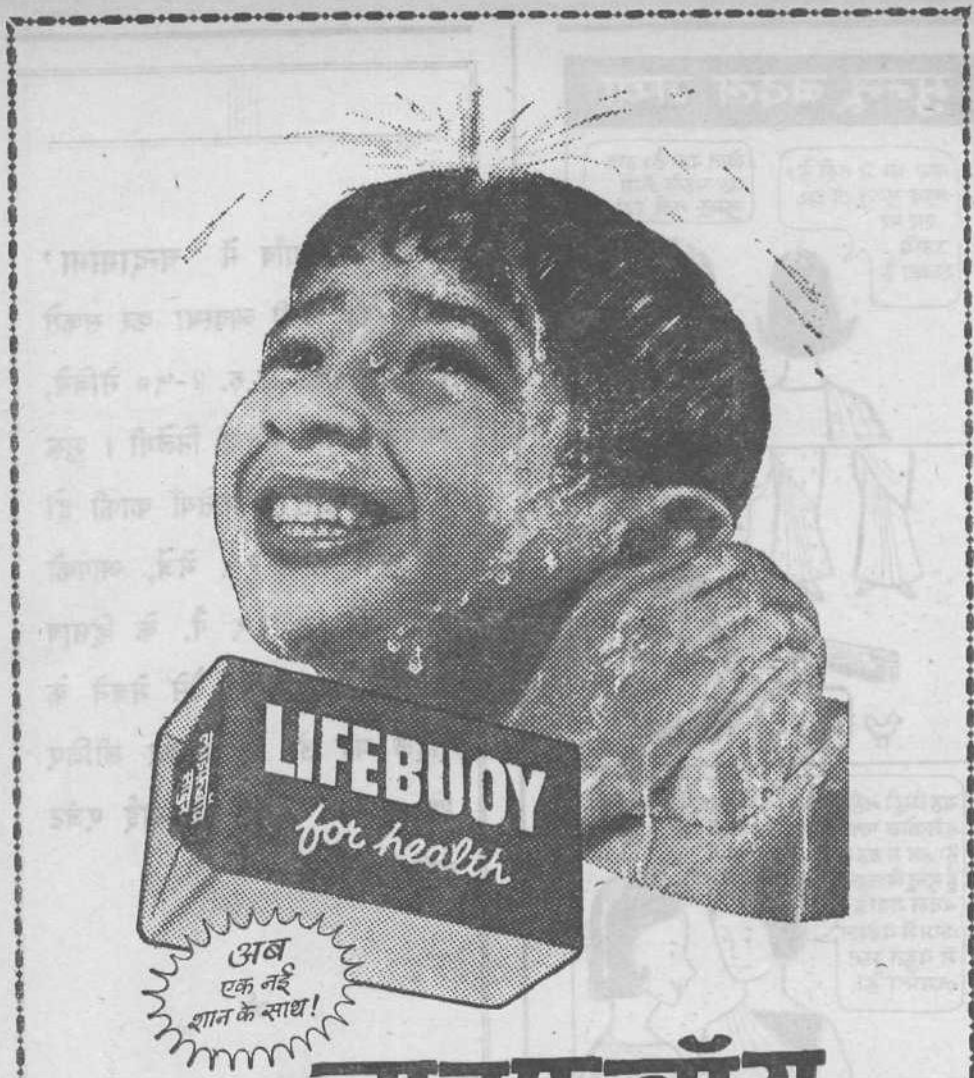

लाइफ़बॉय

है जहाँ
तंदुरुस्ती है वहाँ

हिंदुस्तान लीवर का उत्पादन

L. 47-77 HI

मुन्नू बदल गया

क्या घर में नहीं है? बहन मुन्नू तो घर सर पर उठाये रखता है
खेल रहा है। अब वह पहले जैसा मुन्नू नहीं रहा
भई वाह मुन्नू बेटा तो बड़े अच्छे खिलौने बना रहा है। यह मिट्टी कैसी है?
यह मिट्टी नहीं है यह नुसेकोस प्लास्टिकले है। जब से यह लाई हूँ मुन्नू बिलकुल बदल गया है- काम में व खेल में बहुत मन लगाता है।
मैं आज ही अपनी शीला को भी यह लादूँगी

नुसेकोस
प्लास्टिकले

बच्चों के लिये एक खिलौने बनाने का अद्‌भुत रंग बिरंगा मसाला जो बार-बार काम में लाया जा सकता है। १२ आकर्षक रंगों में सर्वत्र प्राप्त है।

नर्सरी स्कूल व होम इक्विपमैन्ट कम्पनी
पोस्ट बाक्स नं १४१६, दिल्ली-६

आप अपने गाँव में 'चन्दामामा' बिक्री की छोटी व्यवस्था कर सकते हैं। मनिआर्डर से रु. ४-५० भेजिये, आपको आठ प्रतियाँ मिलेंगी। शुरू में अगर चार ही प्रतियाँ काफी हों तो सिर्फ रु. २-२५ भेजें, आपको एक प्रति पर १९ पै. के हिसाब से लाभ होगा। पर पैसे भेजने के पहिले यह तो निर्धार कर लीजिए कि आपके यहाँ अभी कोई एजंट नहीं है।

★

चन्दामामा पब्लिकेशन्स,

वड़पलनी :: मद्रास-२६

दिलीप और साथी

सिनेमा देखने को गये

६० पैसे... ७० पैसे... ८० पैसे...

इसारे पास काफी पैसा है जिससे आज दोपहर को सिनेमा देख सकते हैं!

बहुत अच्छा!

जवाब नहीं!

फिर जल्दी चलो, रॉक्सी सिनेमा में!

दिलीप... मैं नहीं देखना चाहता... वह सिनेमा!

चलो भी, डरपोक मत बनो!

आज का आकर्षण

जंगल के बड़े बड़े जानवर!

उफ्, कितना डरावना सिनेमा था!

मैं भी डर गया हूँ!

और बाहर अंधेरा ही अंधेरा...

मैं इतना डर गया हूँ कि अब आगे चल ही नहीं सकता!

हम घर कैसे पहुँचेंगे?

यहाँ भी ज़रूर जानवर होंगे!

हाँ, मैं समझता हूँ कि हमें अपने टॉर्च से काम लेना चाहिये!

अब कौन डरा हुआ है!

मैं तो एक 'एवरेडी' टॉर्च लेकर सारी दुनिया का चक्कर लगा सकता हूँ!

एक 'एवरेडी' टॉर्च बराबर साथ रखिये। पता नहीं कब उसकी ज़रूरत पड़े।

IWTUC 2163

सीखने में देर क्या सवेर क्या!

नन्हे बालक जल्द ही सीख जाते हैं कि पौधे पानी से ही जिन्दा रहते और बढ़ते हैं। यह साधारण सत्य एक बार सीखने के बाद भूलता नहीं।

आप अपने बच्चों को अब दूसरा सबक सिखाइये कि दांतो व मसूढ़ों की रक्षा कैसे करनी चाहिये जिससे वे बड़े होकर आपका आभार मानेंगे कि सड़े गले दांत व मसूढ़ों की बीमारियों से आपने उन्हे बचा लिया।

आज ही अपने बच्चों में सबसे अच्छी आदत डालें — उन्हे दांतो व मसूढ़ों की सेहत के लिये फोरहन्स टूथपेस्ट इस्तेमाल करना सिखायें। एक दांत के डाक्टर द्वारा निकाला गया फोरहन्स टूथपेस्ट संसार में एक ही है जिसमें मसूढ़ों की रक्षा के लिये डा. फोरहन्स द्वारा निकाली गई विशेष चीजें हैं। इसके हमेशा इस्तेमाल से दांत सफेद चमकने लगते हैं और मसूढ़े मजबूत होते हैं। "CARE OF THE TEETH AND GUMS", नामक रंगीन पुस्तिका (अंग्रेजी) की मुफ्त प्रति के लिये डाक-खर्च के १० पैसे के टिकट इस पते पर भेजें: मॅनर्स डेन्टल एडवायजरी ब्यूरो, पोस्ट बैग नं. १००३१, बम्बई-१.

COUPON C.1

Please send me a copy of the booklet
"CARE OF THE TEETH AND GUMS"

Name _____

Address _____

_____

चन्दामामा

संचालक: चक्रपाणी

हम इस मास एक और धारावाहिक प्रारम्भ कर रहे हैं—"नवाबनन्दिनी"। यह वहाँ शुरू होती है, जहाँ "दुर्गेशनन्दिनी" खतम होती है। इसके पात्र भी वही हैं। कथा काल भी वही है। पर लेखक भिन्न हैं।

"दुर्गेशनन्दिनी" के लेखक हैं, बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय और "नवाबनन्दिनी" के दामोदर मुखर्जी। दोनों ही मूलतः बंगाली में हैं।

कहना न होगा "चन्दामामा" के पाठक इसे भी उसी अभिरुचि से पढ़गे, जिस अभिरुचि और उत्साह के साथ उन्होंने "दुर्गेशनन्दिनी" का स्वागत किया था।

वर्ष: १७ सितम्बर १९६५ अंक: १

CHITRA

१६२७ में जब उसके पिता की मृत्यु हुई, शाहजहाँ दक्खिन में था। उसके दोनों बड़े भाई, खुस्रो और परवेज तब तक मर चुके थे। उसके छोटे भाई शारियार ने, अपनी सास नूरजहाँ के प्रोत्साहन पर लाहौर से घोषणा की कि वह बादशाह था। इस मौके पर, मुमुताजमहल के पिता आसफ़खान ने शाहजहाँ की मदद की। उसने उसको उत्तर देश आने के लिए कहा और उसने उसके आने तक खुस्रो के लड़के दावरबख्स को गद्दी पर बिठाया। फिर उसने कुछ मुखियों को अपनी तरफ़ कर लिया। उनको लेकर लाहौर में, शरियार पर हमला किया। युद्ध में उसे हराकर उसने उसकी आँखें निकलवा दीं।

शाहजहाँ जल्दी ही दिल्ली आ गया। फरवरी १६२८ में, उसने अपने को बादशाह घोषित किया। फिर जो, जो उसके रास्ते में काँटा था, उसने उन सब का खातमा करवा दिया। परिस्थितियाँ भी उसके अनुकूल थीं। आसफ़खान, जिसने उसकी सहायता की थी, उसका प्रधान मन्त्री बन गया।

बादशाह के खिलाफ़ दो ने बगावत की। एक था बुन्देल राजा जुझारसिंह और दूसरा खान जहाँ लोड़ी, नाम का अफ़गान मुखिया। यह दक्खिन का भूतपूर्व राज-प्रतिनिधि था। शाहजहाँ के गद्दी पर आने के बाद, दो सालों में ये बगावतें हुईं और दबा भी दी गईं। इसमें दूसरी बगावत जरा जबर्दस्त थी। इसमें निजामुलमुल्क, अहमद नगर का नवाब, मराठे, राजपूत वगैरह भी शामिल थे। परन्तु शाहजहाँ ने इनकी शक्ति का ठीक अनुमान किया और

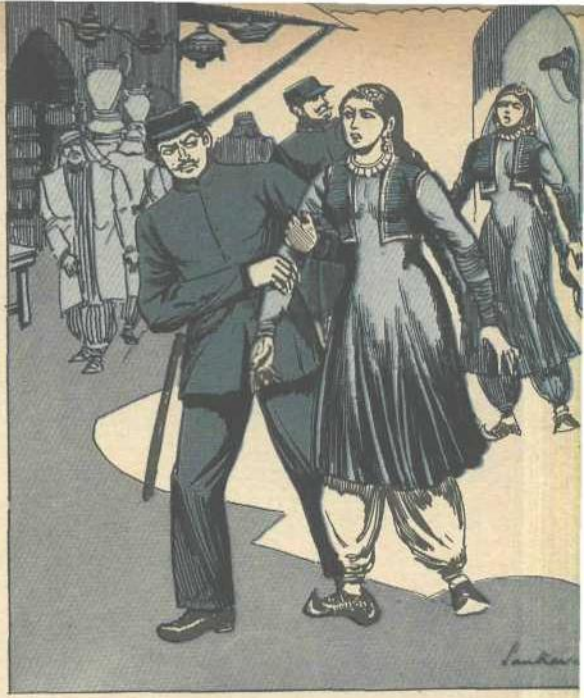

उनसे लड़ने के लिए आवश्यक शक्ति का उपयोग करके विद्रोह को शान्त कर दिया।

बेन्गाल में सातगाँव के पास पोर्चुगीज़ों का अड्डा था। वे अपना व्यापार करने के अलावा, हुगली के पास छावनी-सी बनाकर, बादशाह की खिलाफ़त करने लगे। वे तम्बाखू के व्यापारियों से कर वसूलने लगे। यही नहीं, गुलामों का व्यापार भी करने लगे। उन्होंने मुमताजमहल के दो गुलाम युवतियों को भी पकड़ लिया। शाहजहाँ के हुक्म पर २५ जून, १६३२ में, मुगल सेनाओं ने हुगली को घेर लिया। युद्ध में कई पोर्चुगीज़ मारे गये और बहुत से कैदी बनाकर आगरा लाये गये और वहाँ उनको बहुत सताया गया।

अपने बाप दादाओं की तरह शाहजहाँ ने भी अपने साम्राज्य को दक्षिण में बढ़ाना चाहा। निजामशाही द्वारा शासित अहमद नगर चूँकि मुगल साम्राज्य की सीमा को छूता था इसलिए उस पर अधिक दबाव डाला गया। १६२६ तक मलिक अम्बर मर चुका था। चूँकि उसका लड़का फतहखान अयोग्य था, इसलिए अहमदनगर कमजोर हो गया था। अहमदनगर के सुल्तान के खिलाफ़ बगावत करके, सुल्तान को मारकर, दस वर्ष के सुल्तान के लड़के को नाम के वास्ते गद्दी पर बिठाकर वह स्वयं हुकूमत करने लगा था। १६३१ में इसने मुगलों से साढ़े दस लाख रुपये घूस लेकर दौलताबाद के किले को उनको सौंप दिया था। १६३३ में अहमदनगर मुगल साम्राज्य में मिला दिया गया।

गोलकोन्डा बीजापुर राज्यों का स्वतन्त्र रहना और उनका शियावलम्बी होना शाहजहाँ को भाया नहीं। १६२९ में, गोलकोन्डा पर, १६३१ में बीजापुर पर,

मुगल सैनिकों ने आक्रमण किया। १६३५ में, इन दोनों राज्यों ने छुपे छुपे शाहजी की सहायता की थी। यह जानकर शाहजहाँ ने इनको अपने आधिपत्य में आने के लिए कहा। कर देने के लिए आदेश दिया और हिदायत की कि वे शाहजी की मदद न करें। यही नहीं, वह स्वयं सेना लेकर २१ फरवरी १६३६ में, दौलताबाद पहुँचा। यह देख, तंग आकर, गोलकोन्डा के सुल्तान अब्दुल्ला शा झुक गया और उसने बादशाह की शर्तें मान लीं।

परन्तु बीजापुर का सुल्तान अदिल शा युद्ध के लिए तैयार हो गया। बीजापुर को तीन ओर से, तीन मुगल सेनाओं ने घेर लिया। बीजापुर के सैनिक अपनी राजधानी की तो रक्षा कर सके, पर बाकी सारा राज्य वे खो बैठे। १६३६ में, बीजापुर के सुल्तान को सुलह करनी पड़ी। वह दिल्ली के बादशाह के नीचे रहने के लिए मान गया। बीजापुर का शासन उसी के हाथ में रहा। अहमदनगर का कुछ भाग, उसके राज्य में मिला दिया गया।

इस तरह दक्खिन के राज्य भी मुगल राज्य में मिला लिए गये। जुलाई ११, १६३६ में शाहजहाँ दक्खिन से वापिस चला गया और वहाँ अपने तीसरे लड़के औरगंजेब को अपना प्रतिनिधि नियुक्त करता गया। मुगल साम्राज के दक्खिनी भाग में उन दिनों खानदेश, बिरार, तेलंगाना, दौलताबाद आदि सल्तनतें थीं। वहाँ से सालाना पाँच करोड़ आमदनी होती थी। वहाँ ६४ पर्वत दुर्ग थे। उनमें से कई अभी शाहजी जैसे, सरदारों के आधीन थे।

नेहरू की कथा

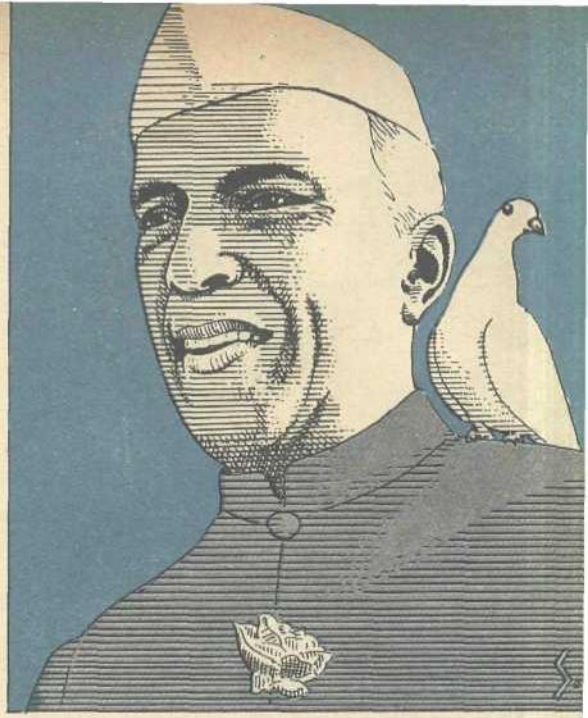

[१४]

दस अगस्त १९२० में मित्रराज्यों ने टर्की पर एक शर्त थोपी और खलीफ़ा के अधिकारों को कम कर दिया। इसके कारण भारत के मुसलमानों में कुहराम मच गया। पंजाब के हत्याकाण्ड से भारतीय पहिले ही उत्तेजित थे, इन अन्यायों का विरोध करने के लिए गान्धीजी देश में दौरा करके अहिंसामय विद्रोह का सन्देश दे रहे थे। अली भाई भी उनके साथ दौरे पर थे। जहाँ देखो, वहाँ "हिन्दू मुसलमान की जय" के नारे सुनाई पड़ते थे।

भावी कार्यक्रम के बारे में और गान्धीजी के असहयोग आन्दोलन के बारे में चर्चा करने के लिए, १९२० की सरदियों में कलकत्ता में कान्ग्रेस हुई। उसके अध्यक्ष थे, लाला लाजपत राय।

कलकत्ता में, लालाजी ने असहयोग आन्दोलन का विरोध किया। उन्होंने कहा कि वह अवास्तविक और अव्यवहारिक था। कई पुराने कान्ग्रेसियों का भी यही मत था। उनमें देशबन्धुदास, अनी बिसेन्ट, मोहम्मद अलि जिन्ना मुख्य थे। इसके बाद, दिसम्बर के अधिवेशन में जिन्ना ने कान्ग्रेस से अपना सम्बन्ध तोड़ लिया। चित्तरंजनदास ने असहयोग आन्दोलन पर आपत्ति की, परन्तु नये सुधारों के अनुसार बनाये गये शासन सभाओं के प्रस्तावित बहिष्कार का उन्होंने विरोध किया।

कलकत्ता अधिवेषन और नागपुर अधिवेषन के बीच के तीन महीनों में गान्धीजी ने फिर देश का दौरा किया और अपने सन्देश का सब वर्गों में प्रचार

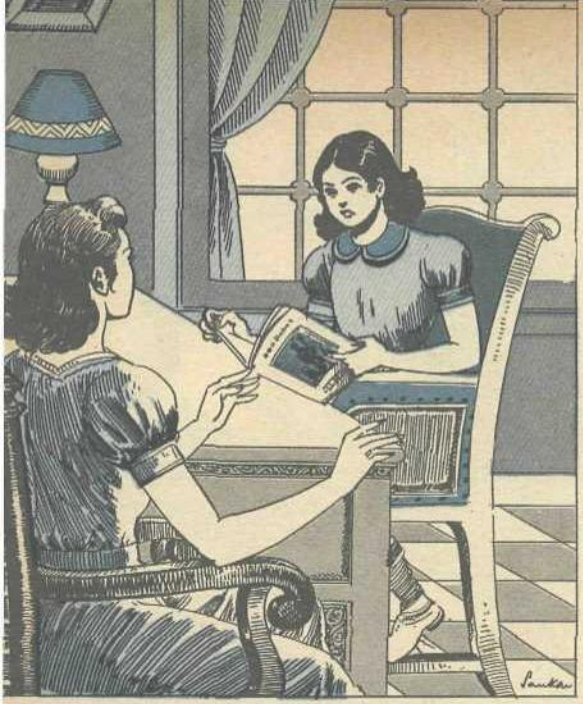

किया। इस सन्देश का अप्रत्याशित परिणाम हुआ। नये सुधारों के अनुसार बननेवाले शासन सभाओं के लिए नवम्बर में चुनाव हुए। लन्डन के "टाइम्स" के प्रतिनिधि ने अलहाबाद के पास चुनावों को देखकर यूँ लिखा—"भारत में, स्वशासन के आन्दोलन का यह प्रारम्भ है, यह कहने के लिए पर्याप्त आधार नहीं दिखाई देते। सवेरे आठ से लेकर, बारह बजे तक, एक ने भी आकर अपना मत न दिया।"

गान्धीजी शासन सभाओं के बहिष्कार का सन्देश दे रहे थे। लोगों ने तदनुसार उनका बहिष्कार किया। बहुत कम लोगों ने मत दिया।

कलकत्ता के अधिवेषन से ही कान्ग्रेस के इतिहास में गान्धी युग प्रारम्भ हो गया था। उसमें उपस्थित अधिक लोग खद्दर धारी थे और हिन्दुस्तानी भाषी थे। जिन्ना को न कान्ग्रेस की राजनीति जँची, न उसका वातावरण ही। उदार दल पूरी तरह सरकार की ओर चला गया था।

मोतीलाल जी ने, जब गान्धी के मार्ग का अनुसरण किया, तो उनके जीवन में असाधारण परिवर्तन आ गया। उन्हें अपनी प्रेक्टीस के साथ, अपनी बड़ी आय भी छोड़नी पड़ी। विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करना पड़ा। अपने बिटिश मित्रों का सहवास छोड़ना पड़ा। अपनी छोटी लड़की कृष्णा के लिए, ब्रिटिश स्कूल से उसको निकालने के बाद, घर में ही टयूटर रखने पड़े।

२६ दिसम्बर १९२० में, नागपुर का वार्षिक अधिवेषन विजयराघवाचारी की अध्यक्षता में हुआ। प्रारम्भिक दशा में, चित्तरंजन दास ने असहयोग आन्दोलन के बारे में बहुत-सी आपत्तियाँ व्यक्त कीं। जिन्ना ने उनका समर्थन किया, उनको कोर्टों के

बहिष्करण के बारे में सब से बड़ी आपत्ति थी। परन्तु बहुमत गान्धी जी के साथ था। आखिर कुछ संशोधनों के साथ, प्रस्ताव प्रस्तुत और पारित हो गया। उसको श्री दास ने ही प्रस्तुत किया था।

"विद्रोह के वातावरण में विद्रोह के प्रतिरोधी नहीं पनप सकते। जो उसका समर्थन करते हैं, उनको नया उत्साह मिलता-सा लगता है। १९२१ में, काँग्रेस का कार्य जो कर रहे थे, वे कुछ कुछ ऐसे ही वातावरण में काम कर रहे थे।" जवाहर कहते हैं। एक बड़े लक्ष्य की प्राप्ति के लिए संघर्ष करने का आनन्द, किसी प्रकार के सन्देह का न होना, आगे का रास्ता साफ़ साफ़ दिखाई देना, दूसरों को उत्साह के साथ भाग लेना देख मानों मन से कोई भार उतर गया हो। सरकार से मोर्चा लेकर, जेल जाने का समय समीप आ रहा था। जवाहर आदि बड़े जोर शोर से काम कर रहे थे।

भारत देश का स्वरूप ही आखों के सामने बदल रहा था। ऐसा लगता था, जैसे स्वराज्य मिलनेवाला हो। गान्धी जी ने काँग्रेस के अधिवेषन में कहा था "यदि

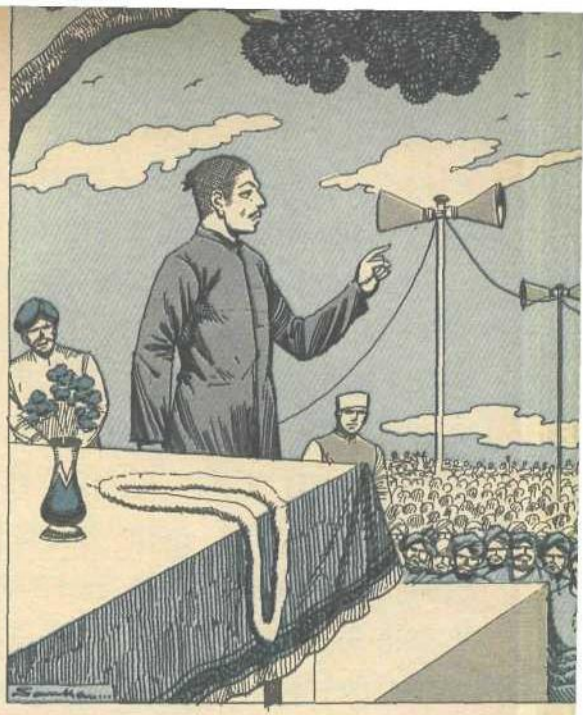

सबने मेरी पुकार का जवाब दिया, तो स्वराज्य एक वर्ष में मिल जायेगा।" सरकार चिन्तित हो उठी। दिसम्बर १९२१ में, वायसराय लार्ड रीडिन्ग ने स्वयं स्वीकार किया था कि वे "दिग्भ्रान्त" से हो गये थे। कारण यह था कि यह आन्दोलन ज्वार की तरह उफनता जा रहा था, यह शान्तियुक्त था, इसलिए उसका दमन भी नहीं किया जा सकता था।

अंग्रेजों को यह विश्वास न था कि यह आन्दोलन यूँ शान्तियुक्त होगा। उनका भय था कि अहिंसा की आड़ में, "गुन्डापन"

भभक उठेगा। इसका एक अच्छा उदाहरण, जवाहर अपनी जीवनी में देते हैं।

मई १९२१ में, स्वरूप (विजयलक्ष्मी पंडित) का विवाह निश्चित हुआ। जब लग्न तय किया गया, तो वह दस मई को आया। विवाह के लिए गान्धी जी, अलि भाई आदि काँन्ग्रेस के नेताओं को बुलाया गया था, उनकी सुविधा के लिए, कार्यकारिणी समिति की बैठक अलहाबाद में बुलाई गई। जब बड़े नेता आ रहे थे, तो क्यों मौका खोजा जाये, इसलिए स्थानीय काँन्ग्रेसियों ने जिला काँन्ग्रेस कमेटी की बैठक बुलाई। इसके लिए आस पास के किसानों के बहुत संख्या में आने की सम्भावना थी।

इन बैठकों की वजह से, अलहाबाद में काफ़ी सरगर्मी थी। यह सब देख, अलाहाबाद के अंग्रेजों ने सोचा कि कोई अनहोनी होने जा रही थी। उनका अपने नौकरों पर ही विश्वास जाता रहा। वे अपनी जेबों में रिवोल्वर रखने लगे। कहीं अचानक गदर-सा हो उठे, तो अंग्रेजों की रक्षा के लिए अलहाबाद के किले में, बड़े पैमाने पर तैयारियाँ की गई थीं। यह जानकर जवाहरलाल नेहरू को आश्चर्य हुआ। अहिंसा की मूर्ति गान्धी जी जब स्वयं आ रहे थे, तो अंग्रेज क्यों डर गये कि हत्याकाण्ड होगा? बाद में मालूम हुआ कि मई १० तारीख को मेरठ में गदर हुआ था। अंग्रेजों को डर था कि मोतीलाल की लड़की की शादी के बहाने १८५७ की क्रान्ति का वार्षिकोत्सव मनाने की तैय्यारियाँ तो नहीं की जा रही थीं।

नवाब नन्दिनी

मन्थारण किला पहिले की तरह था।

उसके पास का आम का बाग, किले के नीचे बहनेवाली दामोदर नदी, पहिले की तरह ही थी। उस रात को विमला की गलती से पठान किले में आ गये थे और उन्होंने क्या उत्पात मचाया था? कितना हो हल्ला किया था? कितनी खून खराबी की थी? उसी रात को वीरेन्द्रसिंह पठानों द्वारा पकड़ लिया गया था। अपनी प्रियतमा तिलोत्तमा को एक बार देखने जगतसिंह आया और वह खूब लड़ा। आखिर वह शत्रुओं द्वारा पकड़ा गया। वीरेन्द्रसिंह दुश्मन द्वारा मार दिया गया। विमला ने नवाब कतलूखान को मारकर इसका बदला लिया। कुछ ही दिनों में कई भयंकर और विचित्र घटनायें घट गईं।

पर अब इसके कोई चिन्ह न थे। मन्थारण किला हमेशा की तरह सुन्दर और शान्त था। भेद इतना ही था कि वीरेन्द्रसिंह नहीं था और विमला अब विधवा थी। सच कहा जाये, तो विमला सुखी ही कब थी? जिस पति को वह चाहती थी, उसके सामने वह पत्नी के रूप में रह न सकी थी। दासी के रूप में उसे रहना पड़ा था। आखिर वह पति भी मारा गया। पर कई बातें ऐसी भी थीं,

दामोदर मुखर्जी

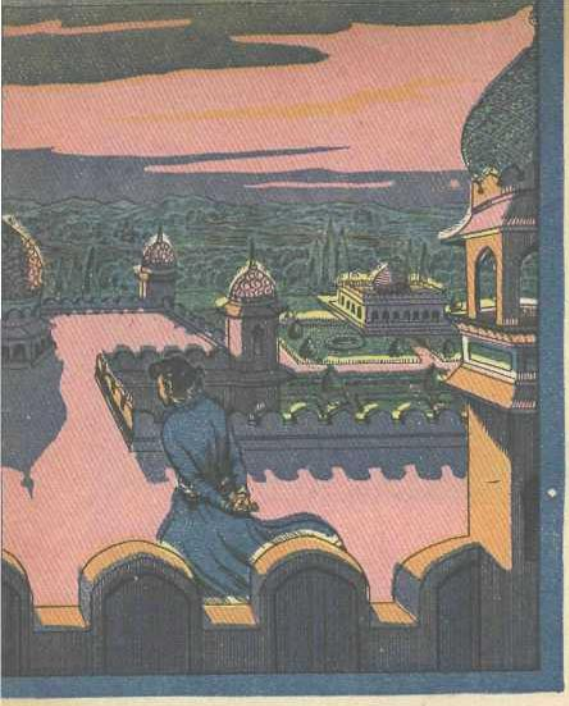

जिन्होंने विमला को सन्तोष दिया था। उस कतलूखान को, जिसने उसके पति को मरवा दिया था, उसने अपने हाथों मार दिया था। विमला के लिए एक और भी सन्तोष का कारण था। वह तिलोत्तमा जिसे उसने लाड़ प्यार से पाला पोसा था, अब राजा मानसिंह की बहू बन गई थी। उसका लड़का अम्बर का राजा बनेगा, क्या यह कोई कम बड़ी बात है?

तिलोत्तमा के लिए भी शोक के कारण थे। वह अपने पिता को खो बैठी थी। पापी कतलूखान के विलास गृह में कैदी रह चुकी थी। जो कोई इस तरह पकड़ी जाती थी, अपनी मान रक्षा नहीं कर पाती थी। परन्तु तिलोत्तमा बिना किसी कलंक के उस पाप के कुँये से बाहर निकल आयी थी। यह सन्तोष का एक कारण था। उसी तरह उसके प्रियतम जगतसिंह का मृत्यु के मुँह से निकल आना भी सन्तोष का एक कारण था। सब से अधिक सन्तोष का मुख्य कारण था, तिलोत्तमा का जगतसिंह का पत्नी होना।

पठानों के पराजय के बाद मानसिंह ने आज्ञा दी थी कि मन्थारण का किला, वीरेन्द्रसिंह की पत्नी विमला और लड़की तिलोत्तमा को दिया जाये।

जगतसिंह और तिलोत्तमा का विवाह हुए अभी एक महीना भी नहीं हुआ था, शाम के समय अन्तःपुर की उपरली मंजिल पर जगतसिंह किसी सोच में इधर उधर चहल कदमी कर रहा था। उसकी फिक्र का कारण भी था। मानसिंह, जो दारुकेश्वर नदी के किनारे छावनी डालकर रह रहा था, पठानों के उपद्रव खतम होते ही छावनी उठाकर पटना चला गया था। उस समय, जगतसिंह छावनी में जाकर अपने पिता से

नहीं मिला। अब चूँकि उसे कोई और काम न था, पत्नी के साथ वह मज़े कर रहा था।

थोड़ी देर बाद, उसके पास तिलोत्तमा आयी। वे प्रेम की बातों में, इस विषय पर बहस कर रहे थे कि उनमें से कौन अधिक भाग्यशाली था। जब जगतसिंह ने कहा कि वह अधिक भाग्यशाली था, तो तिलोत्तमा ने कई कारण दिखाये कि क्यों वह अधिक भाग्यशालिनी थी। जगतसिंह अम्बर राजा का लड़का था। उसके समान शौर्य और पराक्रम में भी कोई न था। वह एक छोटे ज़मीन्दार की लड़की थी। उसकी सेविका बनने के योग्य थी।

यही नहीं, तिलोत्तमा ने, जगतसिंह ने जो जो साहसिक कार्य उसके लिए किये थे, वे भी बताये, "वीरों में वीर हो, पर एक बार मुझे देखने के लिए आधी रात के समय चोर की तरह मेरे किले में आये थे। मुझ से दो बातें करने आये थे कि गैर अन्तःपुर में आ गये। मेरी प्राणों की रक्षा करने के लिए अपने प्राण न्योछावर करने तक के लिए तैयार हो गये। मुझ से विवाह करके आप अपने पिता के क्रोध भाजन भी हुए।"

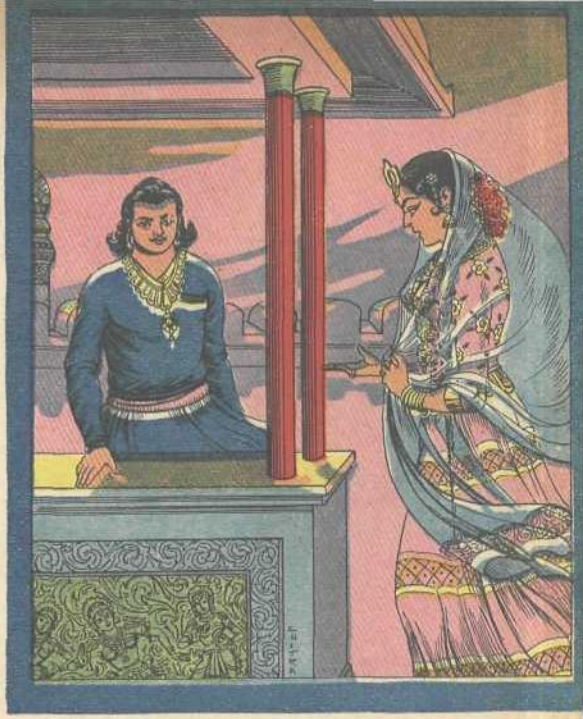

तिलोत्तमा के, मानसिंह के क्रोध के बारे में संकेत करते ही, जगतसिंह चिन्तित हो उठा। "यह बड़ी गूढ़ समस्या है। इसके बारे में क्या करना है, सोचना है।"

तिलोत्तमा यह सुनकर कुछ कह न पाई। उसका मुँह सिकुड़-सा गया।

"मेरे पिता, मुझ पर क्रुद्ध हैं, यह मैं जानता हूँ। वे अपने क्रोध को दिखा नहीं सकते, न किसी के द्वारा उसे जता ही सकते हैं, पर कई ऐसी बातें हैं, जो ये बताती हैं कि वे मुझसे नाखुश हैं।" जगतसिंह ने कहा।

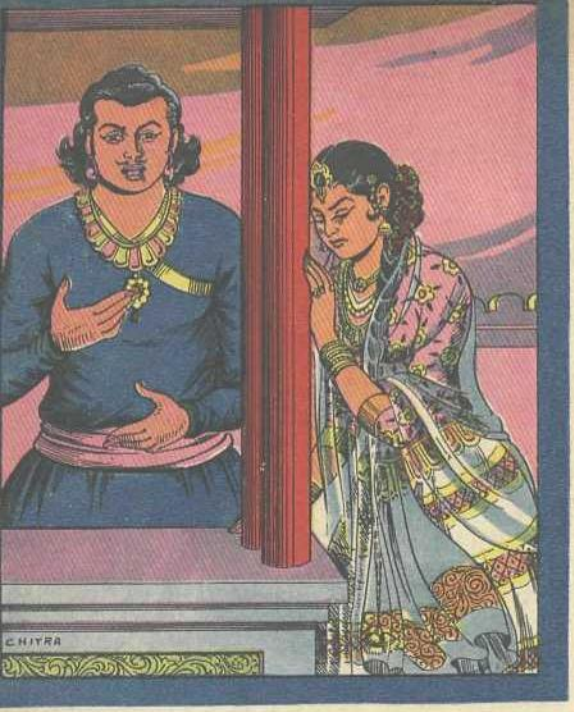

"तो आप क्यों नहीं सम्भलते?" तिलोत्तमा ने पूछा।

"सम्भलना? तुम भी कितनी नादान हो। जो तुम्हारे प्रेम में फँस गया हो, क्या वह मौत की भी परवाह करेगा, यदि वह सामने खड़ी हो जाये? मैं तो सम्भलने के बारे में सोच ही नहीं रहा हूँ।" जगतसिंह ने कहा।

"तो क्या सोच रहे हैं?"

"अब दो बातों के बारे में सोचना है। मेरे पिता राजपूत वीर हैं, जो करना है, उसको टालते नहीं हैं। उन्हें कोई रोकनेवाला भी नहीं है। अकबर बादशाह ही उनके मन का ख्याल करके रहता है, औरों का तो कहना ही क्या? इसलिए वे मुझे मौत की-सज़ा भी दे दें, तो उसे कोई नहीं हटा सकता। डरो मत! मुझे मौत का डर नहीं है। राजपूत मौत से नहीं डरते। पर मौत के कारण, जो वियोग की बाधा होती है, मैं उससे डरता हूँ।" उसने कहा।

"मुझे तो कोई वियोग भय नहीं है। वीरों की तरह, वीरों की पत्नियाँ भी हँसती हँसती प्राण छोड़ सकती हैं।" तिलोत्तमा ने कहा।

"अच्छा, मान लो वह भय नहीं है। उससे बड़ा एक और भय है। मेरे पिता तुरत मेरे प्राण न लेकर नाना यातनायें मुझे दे सकते हैं।"

"वह कैसे?" तिलोत्तमा ने पूछा।

"क्योंकि उनको हमारा विवाह पसन्द नहीं है, वे हम दोनों को अलग कर सकते हैं।"

यह सुन, तिलोत्तमा के आँसू बहने लगे। मेरी सौतेली माँ विमला ने शास्त्रोक्त रीति से मेरे पिता से विवाह किया था,

पर वह हमारे घर में दासी के रूप में रहती थी। क्या ससुराल में मैं दासी भी न बन सकूँगी?"

"घबराओ मत, तिलोत्तमा! तुम अकारण अपने मन को न सताओ। अगर ऐसी नौबत आ गई तो हम मनुष्य समाज को छोड़कर कहीं समुद्र तट पर किसी पेड़ के नीचे आराम से ज़िन्दगी काटेंगे। फिर भी कोई ऐसा काम नहीं है, जो मेरा पिता चाहें और वे न कर सकें। इसलिए मैं उनको खुश करने के लिए हर तरह से कोशिश करूँगा। फिर भगवान जानें।" जगतसिंह ने कहा।

"अगर कोई और रास्ता नहीं है, तो मौत है ही।" तिलोत्तमा ने धीरज बटोरकर कहा।

उस दिन पति पत्नी को चिन्ता के कारण नींद न आयी। आखिर, सवेरे के समय, तिलोत्तमा सो गई। जगतसिंह चुपचाप बिना उसकी नींद तोड़े उठा और ठंड़ी बयार में मनःशान्ति पाने के लिए घुड़सवारी के लिए चला गया।

वह अपने सफेद घोड़े पर सवार होकर, किले का फाटक पार करके आया। फिर

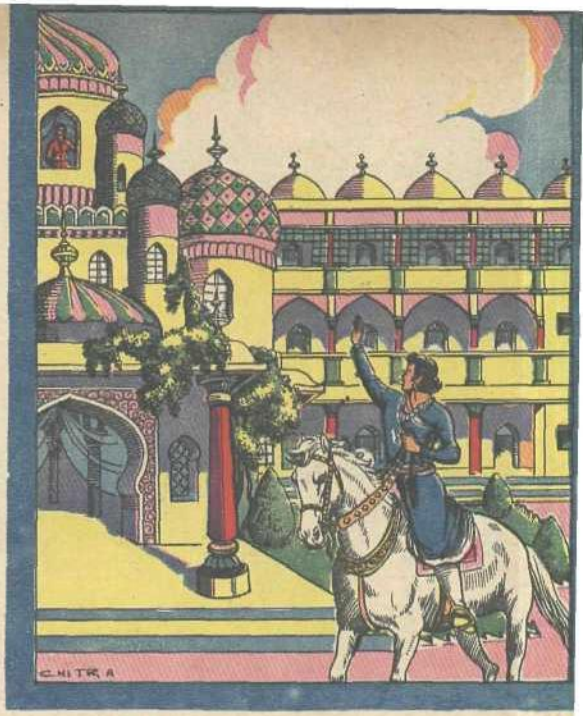

उसने मुड़कर देखा, तिलोत्तमा ने खिड़की के पास खड़े होकर उसे देखा। "अन्दर जाओ, मैं अभी आया...." जगतसिंह ने हाथ से ईशारा किया और घोड़े पर आगे निकल गया। वह कुछ दूर जाकर वापिस आना चाहता था।

वह जब उस आम के बाग में से, जहाँ उसने विमला के लाये हुए भाले से एक पठान को मारा था, जाते हुए जगतसिंह को, गजपति विद्यादिग्गज—"रसिक राजा" दिखाई दिया। उसकी वेषभूषा कुछ कुछ हिन्दू थी और कुछ कुछ मुसलमानी।

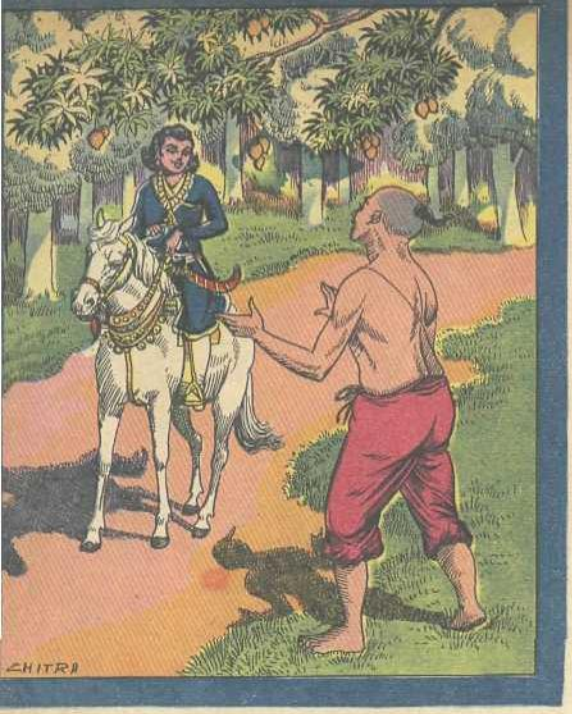

उसने जगतसिंह को देखकर कहा—"खुदा नारायण, आपका भला करे।"

"गजपति विद्यादिग्गज...." जगतसिंह ने आश्चर्य से कहा।

"हाँ....स्वामी....कभी पहिले व्याकरण सीखा था। अब उर्दू भी सीख ली है। अब मेरी कीर्ति को कोई धोखा नहीं देगा।" दिग्गज ने कहा।

"यह पोषाक क्या है?"

"वे जानेवाले पठान जाते जाते मेरी जाति और मेरा वेष भी बदलते गये। जब मैंने अपने गुरु के पास जाकर पाठ सिखलाने के लिए कहा, तो उन्होंने कहा, तीन रोज़ गंगा के किनारे रहो, गंगा स्नान करो, सिर घुटाकर, चोटी रखवाकर आओ, तभी सिखाऊँगा, मैं वही करके आ रहा हूँ।"

"मगर यह पोषाक?"

"क्या करूँ? मेरे सब कपड़े पठान ले गये हैं।"

जगतसिंह दिग्गज के हाथ में एक रुपया रखकर आगे चला गया। जब वह कुछ दूर गया, तो उसे दूरी पर शैलेश्वर मन्दिर दिखाई दिया। उसने शैलेश्वर का दर्शन कर आने का निश्चय किया।

इतने में उसको घोड़े की आहट सुनाई दी। दूर हवा में धूल उड़ रही थी। शायद सैनिक थे। वे पठान सैनिक नहीं हो सकते थे। पठान सब उड़ीसा चले गये थे। देश में अगर कहीं कोई सैनिक थे, तो वे बादशाह के सैनिक ही थे।

जल्दी ही उसने सैनिकों को देखा। वे मानसिंह के सैनिक मालूम होते थे। करीब पचास आदमी होंगे। उनके आगे आते हुए नायक के आज्ञा देते ही, सैनिकों ने घोड़े रोके, मियान में से तलवार

निकालकर जयकार करने लगे, "अकबर बादशाह की जय, राजा मानसिंह की जय।"

जगतसिंह ने भी तलवार निकालकर उसी प्रकार जय जयकार किया, सैनिकों के सरदार से पूछा—"मथुरासिंह! यह क्या बात है? बादशाह कुशल हैं न? महाराजा ठीक हैं न?"

मथुरासिंह ने युवराज के पास आकर एक रुमाल में से एक पत्र निकालकर सविनय उसे दिया।

"महाराजा की क्या आज्ञा है?" जगतसिंह ने पूछा।

"मैं आपका दास हूँ। मुझे माफ़ कीजिये। महाराजा की आज्ञा है कि जैसे भी आप हों, आपको उनके सामने हाज़िर किया जाये।"

"कहाँ जाना है?"

"पटना! महाराजा वहीं हैं।"

"क्या यात्रा की तैयारी कर सकता हूँ?"

"माफ़ कीजिये युवराज, हुक्म है कि यदि आप हमारे साथ न आये, तो आपको कैदी बनाकर ले जाया जाये।"

"क्या मैं अपनों से विदा भी नहीं ले सकता हूँ?"

"माफ़ करें हुज़ूर!"

"महाराज की आज्ञा नहीं बदली जा सकती, यह मैं जानता हूँ। पर मान लो, मैं तुम्हारा कैदी होने से इनकार कर देता हूँ और युद्ध के लिए उतारू हो जाता हूँ, उस हालत में महाराज की क्या आज्ञा है?"

"आप मेरे मुख से क्यों ऐसी बातें निकलवातें हैं, जो मुझे नहीं करनी चाहिए। महाराज की आज्ञा है कि युवराज को सजीव नहीं तो, निर्जीव उनके सामने उपस्थित किया जाये।"

जगतसिंह जान गया कि उसके पिता का दृष्टिकोण, जैसे उसने सोचा था, उतना ही भयंकर था। और कोई रास्ता न था। पिता के सामने दण्ड भुगतना ही अच्छा था।

उसने मथुरासिंह से कहा—"मेरी सेना दारुकेश्वरी नदी के किनारे जहानाबाद के पास है, उसका क्या होगा?"

"उसकी व्यवस्था मैं किये देता हूँ।" यह कहकर मथुरासिंह ने एक सैनिक को जहानाबाद भेजा। उस सैनिक को मन्थारण में से ही जाना था।

जगतसिंह ने उस सैनिक से कहा—"यदि तुम्हें मन्थारण के किले के पास कोई दिखाई दे, तो बताना कि मैं अपने पिता की आज्ञा पर उनको देखने पटना चला गया हूँ।"

फिर वह पिता के भेजे हुए घुड़ सवारों के साथ निकल पड़ा। उसकी इच्छा पर मथुरासिंह ने अपने सैनिकों को दो टुकड़ियों में बाँट दिया। आगे पीछे सैनिक चल रहे थे और जगतसिंह बीच में, उसके साथ मथुरासिंह था। (अभी है)

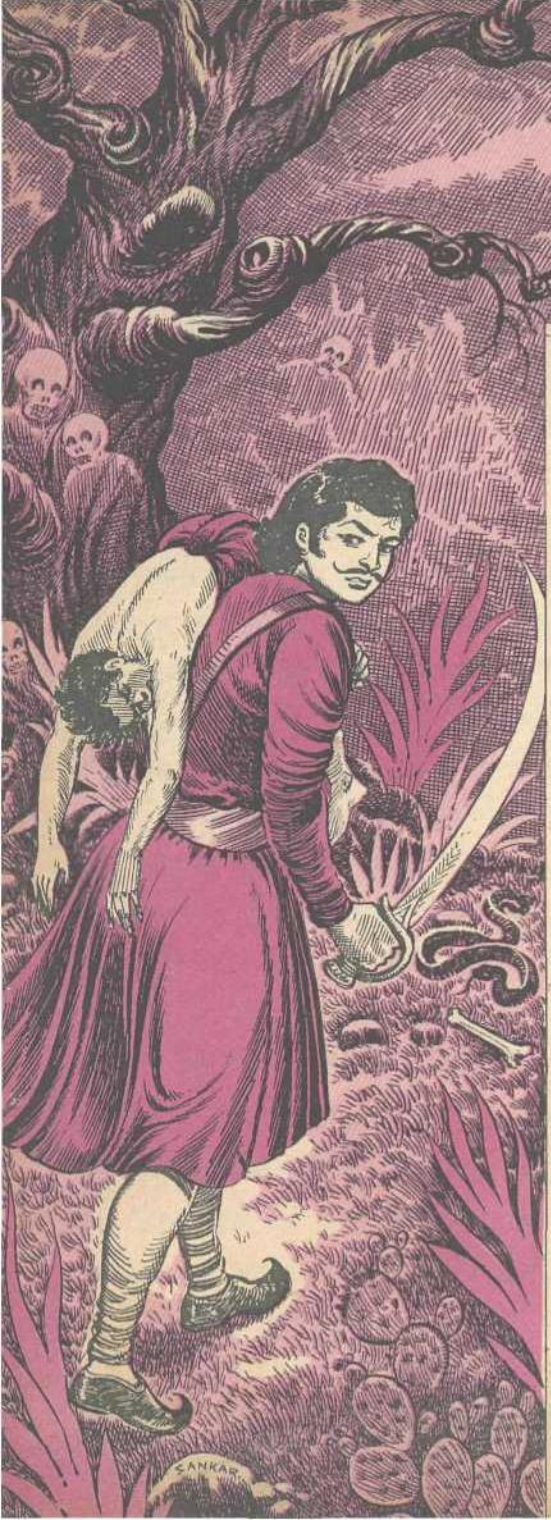

विष्णु की माया

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह फिर पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतारकर, कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, तुम आधी रात को इतना कष्ट उठा रहे हो, हो सकता है, यह कोई भ्रान्ति हो और इस भ्रान्ति के निवारण से तुम अपने घर ही रह सकते हो, कभी यह सन्देह तुम्हें हुआ? इसी प्रकार का अनुभव कभी पुष्कर को हुआ था। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, इसलिए उसकी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" वह यूँ सुनाने लगा।

विन्ध्या के जंगलों में पुष्कर नाम का एक छोटा-सा राज्य था। उसका पुष्कर नाम का राजा था। वह युवक था। हाल ही में गद्दी पर बैठा था। उसके माँ बाप

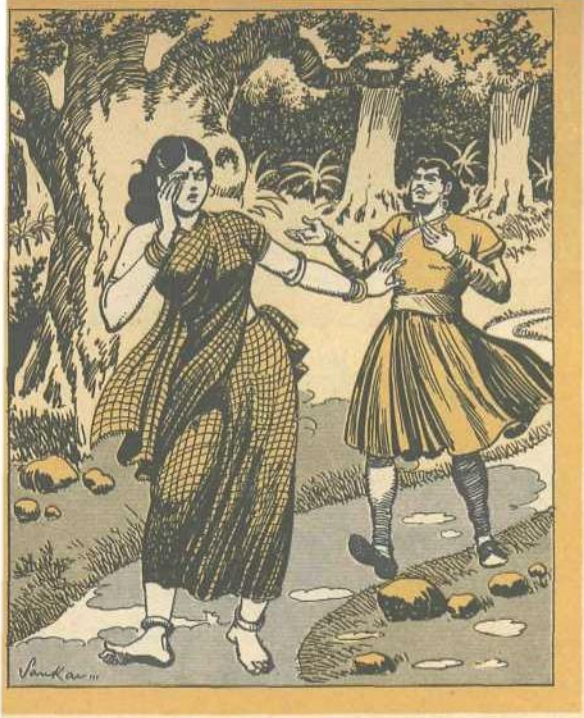

दोनों ही गुजर गये थे। वह उनके दिन वगैरह नियमित रूप से मनाता और बाकी समय विष्णु के मनन में लगाता। वह बचपन से ही विष्णु भक्त था। माँ बाप के बाद सिवाय विष्णु के, उसको लगा, उसका कोई मित्र न था। "मैं विष्णु पर इतना विश्वास करता हूँ। वे क्यों नहीं मुझ पर अनुग्रह करते? कम से कम अपनी महिमा क्यों नहीं प्रदर्शित करते?"

देखते देखते एक साल गुजर गया। पुष्कर के पिता के श्राद्ध का दिन आया। उसकी व्यवस्था के लिए अपने कर्मचारियों को आज्ञा देकर, पुष्कर सवेरे ही नदी में स्नान करने गया। उसने विष्णु का ध्यान करके ज्योंहि डुबकी लगाई, तो वहाँ एक अप्सरा-सी सुन्दर एक चमारिन आयी। उसको देखते ही पुष्कर का मन चपल हो उठा। अगर उसको पत्नी न बनाया गया, तो उसको जीवन व्यर्थ लगा। यह सोच कि उस स्त्री को परमात्मा ने उसके लिए बनाया था वह उसके पीछे चल पड़ा। यह देख उस स्त्री ने कहा—"हुज़ूर आप राजा हैं और मैं अछूत। मेरा विवाह भी नहीं हुआ है। यदि आप मेरे साथ आये, तो मेरे लोग मुझे मार देंगे। आपको ऐसा नहीं करना चाहिए।"

फिर भी पुष्कर उसके पीछे चलता चलता उसकी बस्ती तक गया। वहाँ उसने लोगों से कहा—"इस लड़की का मेरे साथ विवाह करो। मैं इस पर मुग्ध हूँ।"

चमारों ने कहा—"हमें तो कोई आपत्ति नहीं है। किन्तु तुम राजा हो। यदि तुमने इससे शादी की, तो लोग क्या कहेंगे?" पर पुष्कर ने जिद पकड़ी कि वह उससे ही विवाह करेगा। उसका विवाह उस चमारिन से कर दिया गया। वह उसी बस्ती में

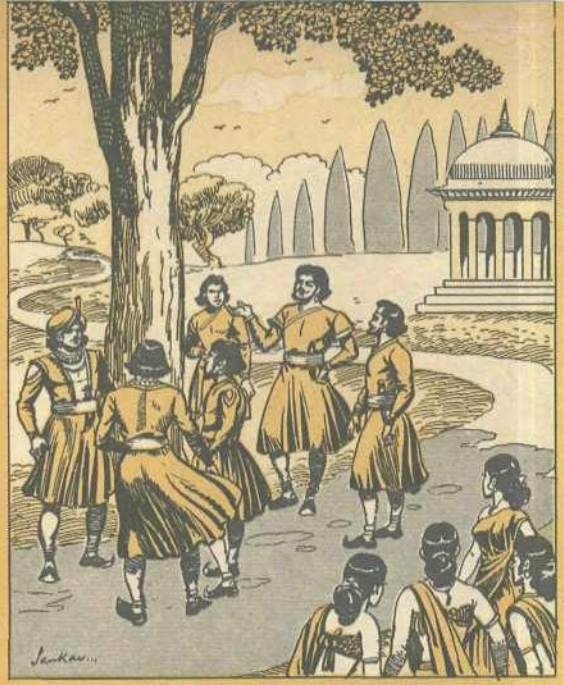

रहने लगा। उसके उस पत्नी से दो लड़के और एक लड़की हुई।

चमारिन के भाइयों ने कहा कि वे उसकी गृहस्थी न चला सकेंगे और उससे अलग गृहस्थी चलाने के लिए कहा। पुष्कर पर गृहस्थी का भार अधिक हो गया। वह पत्नी, जो चप्पलें सीतीं, उन्हें बेचता। जंगल में लकड़ियाँ काटकर, उन्हें पास के कस्बे में बेच आता।

जब वह लकड़ी का गट्ठर लेकर, एक बार कस्बे में गया, तो उसने एक अजीब बात सुनी। उस नगर की राजकुमारी रोज जो उपटन लगाती थी, उसे आँगन में एक कोने में डाल दिया जाता था। वहाँ एक पौधा उग गया। कोई नहीं बता सका, वह क्या पौधा था। राजा ने घोषणा कर रखी थी कि जो कोई उस पौधे का नाम बतायेगा, उसके साथ अपनी लड़की का विवाह कर देगा। उसी के बारे में लोग बात कर रहे थे।

पुष्कर लोगों के साथ राजमहल में गया। उसने उस पौधे को देखकर कहा—"यह चन्दन का पेड़ है, इतना भी नहीं जानते?" दासियों ने जाकर, यह बात राजा से कही, राजा ने उसे बुलाकर, उसका अपनी लड़की के साथ विवाह कर दिया।

चमारिन यह न समझ सकी कि क्यों नहीं उसका पति जो जंगल में लकड़ियों के लिए गया था, वापिस आया था। उसे कुछ समय बाद मालूम हुआ कि राजा ने उसके साथ अपनी लड़की का विवाह कर दिया था और वह राजमहल में भोग-विलासों का आनन्द ले रहा था। चमारिन ने तुरत अपने बच्चों को बुलाकर, कहा—"तुम्हारा पिता अमुक जगह है।

वहाँ जाकर कहना कि गुज़ारा नहीं हो रहा है, जो वह दें, लेकर चले आना।"

पुष्कर जिस महल में, अपनी नयी पत्नी के साथ रहा था, उसके नीचे आकर, वे चिल्लाये—"बाबू, भूख, भूख।" पुष्कर ने खिड़की में से उन्हें देखा। अपने लड़कों को पहिचाना। उसने अपनी अंगूठी निकाल कर उनके सामने फेंक दी। वे उसे लेकर, अपनी माँ के पास चले आये।

उसकी नयी पत्नी ने, जो शीशे के सामने बैठी बाल संवार रही थी, यह सब देखा। पर उसने ऊपर से कुछ न कहा।

चमारिन ने उस अंगूठी को बेचकर, गृहस्थी कुछ दिन आराम से चलाई। जब पैसा खतम हो गया, तो उसने अपने बच्चों को, फिर उनके पिता के पास भेजा। वे तीनों फिर अपने पिता के मकान के पास आकर चिल्लाये—"भूख, भूख।" इस बार पुष्कर ने खिड़की में से दो सोने की तश्तरियाँ फेंक दीं। बच्चे उसे लेकर अपनी माँ के पास चले गये।

राजकुमारी ने इस बार भी, जो कुछ उसके पति ने किया था, वह देखा। उसने एक कागज़ पर लिखा। "उस घड़े का क्या किया जाये, जिसे कुत्ते ने छू लिया हो।" उस कागज़ को, एक दासी के द्वारा, अपने पिता के पास भिजवाया।

राजा ने पढ़ा, "जिस घड़े को कुत्ता छुये, उसे दूर फेंक देना चाहिए।" उसने यह एक कागज़ पर लिखकर, अपने मन्त्री को दिखाया।

"फेंक देने की कोई जरूरत नहीं है। अग्नि से शुद्ध करके, फिर उपयोग किया जा सकता है।" मन्त्री ने कहा।

तब राजा ने यह जवाब लिखा। अपनी लड़की के पास भेजा, जिस घड़े को कुत्ते

ने छू दिया हो? उसे आग को दिखाकर फिर उपयोग में लाया जा सकता है।

उस दिन रात को जब पुष्कर सो रहा था, तो राजकुमारी ने उसके कमरे को आग लगा दी। सोते पुष्कर पर जलती चीजें पड़ीं।

वह दर्द के कारण झट पानी में से उठा। उसे अपने पिता की वार्षिकी स्मरण हो आयी। यह सोच कि उसने काफी देरी कर दी थी वह अपने घर गया।

"अरे....इतनी जल्दी वापिस चले आये। क्या अभी स्नान समाप्त हो गया है?" ब्राह्मणों ने कहा।

स्नान करने के लिए जब उसने डूबकी लगाई थी, तब से क्या क्या हुआ था। उसने उन अनुभवों के बारे में ब्राह्मणों से कहा। उन्होंने सब सुनकर कहा—"निश्चय ही यह विष्णु माया है।"

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। विष्णु ने जो अपनी माया इस प्रकार दिखाई, उसका क्या मतलब था? यदि तुमने इस प्रश्न का जान बूझकर उत्तर न दिया, तो तुम्हारे सिर के टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे।"

तब विक्रमार्क ने कहा—"पुष्कर, अपनी राजा की जिम्मेवारियों को भूलकर, हमेशा विष्णु चिन्तन में समय बिताता था। इसलिए मनुष्य के स्वाभाविक विकार, गरीबों के निकृष्ट जीवन, राज्य सम्बन्धी समस्याओं का पुष्कर को परिचय देने के लिए विष्णु ने यह माया दिखाई थी।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य होकर, फिर पेड़ पर जा बैठा।

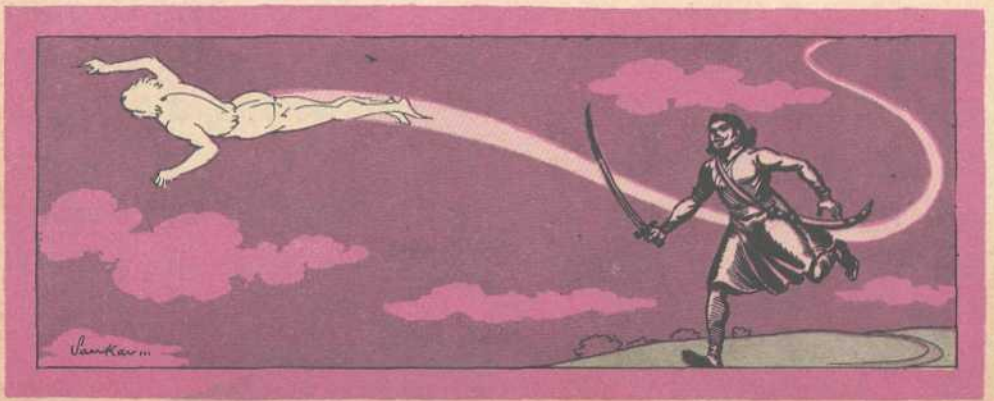

तारावलोक

कभी शिवि देश का चन्द्रावलोक राजा था। उसकी पत्नी चन्द्रलेखा थी। उसके पास एक प्रख्यात हाथी था, जिसका नाम कुवलयपीड़ था। उस हाथी के कारण शत्रु राजा, चन्द्रावलोक के राज्य का कुछ न बिगाड़ सकते थे।

चन्द्रावलोक के, तारावलोक नाम का एक लड़का हुआ। वह बड़ा सीधा सादा, धर्म परायण, ज्ञानी और पितृ भक्त था। यही नहीं, वह बड़ा दानी भी था।

तारावलोक जब सयाना हुआ, तो उसके पिता ने भद्र राजा की लड़की माद्री से विवाह करके, उसको युवराज घोषित किया। जब से वह युवराज बना, वह दान इत्यादि करने लगा। सवेरे उठते ही वह कुवलय पीड़ पर सवार होता और ऐसे लोगों को खोजता निकलता, जो उसके दान के पात्र थे। उसके दान की कीर्ति सर्वत्र व्याप्त हो गयी।

कुछ दिनों बाद, माद्री के जुड़वें बच्चे हुए। उनका नाम राम, लक्ष्मण रखा गया। उन पर दादा, दादी और माँ बाप को बड़ा लाड़ था। लोगों को, ऐसा लगता, जैसे तारावलोक से अधिक कोई भाग्यशाली न हो।

यह उसके शत्रु फूटी आँखों न देख सके। उन्होंने कुछ ब्राह्मणों को बुलाकर कहा—"तुम तारावलोक के पास जाकर, कुवलयपीड़ नाम के हाथी को दान में माँगो। यदि वह हाथी तुम्हें दान में दे देगा, तो उसका बल कम हो जायेगा। उसके बाद हम उसका राज्य आसानी से

ले लेंगे। यदि उसने वह हाथी दान में न दिया, तो उसकी कीर्ति सारी मिट्टी में मिल जायेगी।"

ब्राह्मण इस षड़यन्त्र के लिए मान गये। वे तारावलोक के पास गये। उन्होंने उससे कुवलयपीड़ दान में माँगा।

तारावलोक ताड़ गया कि उन ब्राह्मणों को उस हाथी से कोई काम न था, किसी के भड़काने पर ही, वे उसे माँगने आये थे। परन्तु जब तक उसके तन में प्राण था, वह किसी को न, नहीं करना चाहता था। इसलिए उसने ब्राह्मणों को तुरत कुवलयपीड़ दे दिया।

ब्राह्मण, जब हाथी को पकड़कर ले जा रहे थे, तो नागरिक यह देख क्रुद्ध हुए।

यद्यपि उस राज्य का एक राजा था, तो भी शासन, प्रजा की सम्मति पर ही होता था, राजा को प्रजा की इच्छा का आदर करना होता था। इसलिए लोगों ने प्रजावलोक के पास जाकर कहा—"राजा, लगता है आपके पुत्र राज्य नहीं करना चाहते। उस कुवलयपीड़ को, जिसे शत्रु स्वप्न में देखकर काँपते थे, उन्होंने किसी और को दे दिया है। या तो उस हाथी को वापिस

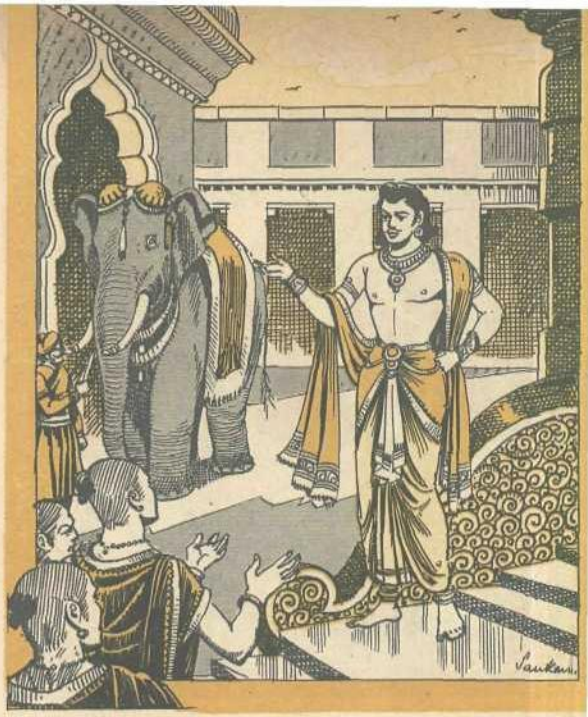

मँगवाइये, नहीं तो, अपने लड़के को जंगल में जाकर, तपस्या करने के लिए कहिये। नहीं तो, हम किसी और को राजा नियुक्त करेंगे।"

चन्द्रावलोक ने प्रजा की राय के बारे में अपने लड़के को बताया।

"हाथी को मैंने दान दे दिया है। अब वापिस नहीं आयेगा। जो कोई, जो कुछ माँगता है, मैं उसे दे देता हूँ। जो राज्य प्रजा के आधीन हो, वह मुझे नहीं चाहिए। मुझे उस धन सम्पत्ति से क्या लाभ, जो मैं औरों को न दे

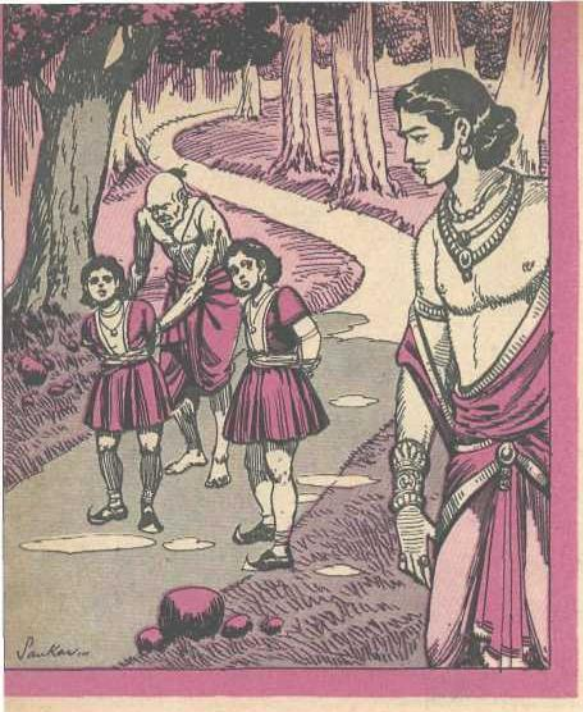

सकूँ। मैं जंगल में जाकर रहूँगा।" तारावलोक ने कहा।

वह वल्कल वस्त्र पहिनकर, अपनी पत्नी और लड़कों को लेकर, उन बच्चों के लिए, एक घोड़ा गाड़ी लेकर, वन की ओर चला।

रास्ते में, उसे फिर कुछ ब्राह्मण दिखाई दिये। तारावलोक से उन्होंने गाड़ी में जुते घोड़े माँगे। उसने न न किया। घोड़े खोलकर, उनको दे दिये। वह अपनी पत्नी के साथ गाड़ी खींचता, आगे बढ़ने लगा।

बच्चों को गाड़ी में बिठाकर, गाड़ी खींचते, जब वे जंगल के रास्ते जा रहे थे, तो खींचते खींचते, वे थक गये और एक जगह सुस्ताने के लिए पेड़ के नीचे बैठ गये। इतने में एक ब्राह्मण ने आकर, वह गाड़ी भी माँगी। तारावलोक ने उस गाड़ी को ब्राह्मण को दे दिया। अपने लड़के और पत्नी को लेकर, तपोवन में चले गये। वे पेड़ों की छाया में ही ज़िन्दगी बसर करने लगे।

माद्री पति के इशारे पर ही रहती आयी थी। पति जो कुछ करता, उसको उस पर कोई आपत्ति नहीं होती थी।

जब वह एक दिन पति के लिए फल वगैरह इकट्ठा करने के लिए गयी हुई थी, तो उसकी कुटिया में, एक बूढ़ा ब्राह्मण आया। उसने तारावलोक से उसके दो बच्चे राम, लक्ष्मण को देखकर, उन दोनों को भी माँगा।

"विधि शायद मेरी परीक्षा ले रही है। मैं बिना बच्चों के रह सकता हूँ। पर मेरे मना करने पर किसी को जो दुःख होगा, मैं उसे सह नहीं सकता। यह मेरे लिए सम्भव नहीं है।" तारावलोक

ने उस बूढ़े ब्राह्मण को अपने दोनों बच्चे दे दिये।

राम, लक्ष्मण ने उस बूढ़े ब्राह्मण के साथ, न जाने की ज़िद पकड़ी। उस ब्राह्मण ने उन बच्चों को बेलों से बाँध दिया। उनको मारता पीटता, ले जाने लगा। वे "माँ माँ" चिल्लाते, रोते, पीछे मुड़कर, पिता की ओर देखते, उस ब्राह्मण के साथ चले गये।

कुछ देर बाद, माद्री फूल, फल आदि कन्दमूल लेकर, अपनी कुटिया में आयी। उसने अपने पति को सिर झुकाये हुए देखा, पर बच्चे नहीं दिखाई दिये। उनकी खेलने की चीज़ें मिट्टी के रथ और घोड़े इधर उधर पड़े हुए थे। उसका दिल धड़का। उसने पूछा—"बच्चे कहाँ हैं?"

उसके इस कथन से इन्द्र का सिंहासन हिल उठा। यह देख माद्री और तारावलोक की दान शक्ति के कारण लोक कम्पित हो उठा था, इन्द्र ब्राह्मण रूप में तारावलोक के आश्रम में आया। उसने उससे उसकी पत्नी माद्री को माँगा। अपनी पत्नी का दान करने के लिए भी तारावलोक तुरत मान गया।

"अरे, अब तुम्हारी पत्नी ही तो बाकी रह गई है। इसे भी देकर, बाद में क्या करोगे?" इन्द्र ने तारावलोक से पूछा।

"मैं कुछ नहीं करना चाहता। मेरी बस, एक ही इच्छा है। मैं ब्राह्मणों को न नहीं करता हूँ। मैं अपने प्राण भी दे देता हूँ।" तारावलोक ने कहा।

इन्द्र अपने असली रूप में व्यक्त हुआ। उसने कहा—"मुझे तुम्हारी पत्नी नहीं चाहिये। तुम जल्दी ही विद्याधरों के सम्राट होने जा रहे हो।" यह कहकर वह अन्तर्धान हो गया।

इस बीच, राम लक्ष्मण को जो ब्राह्मण ले गया था, वह चन्द्रावलोक के नगर में जाकर एक गली में, उनको बेचने की कोशिश कर रहा था। नागरिकों ने उन बच्चों को पहिचान लिया। वे उनके साथ, उस बूढ़े ब्राह्मण को भी पकड़कर राजा के पास ले गये। उस ब्राह्मण से, जो कुछ हुआ था, चन्द्रावलोक ने जान लिया। अपने लड़के की दानशीलता को देखकर, उसे राज्य पर ही वैराग्य हो गया। उसने वन में जाकर तपस्या करने की ठानी।

नागरिकों ने बहुत कहा, पर उसने न सुनी। पैसा देकर अपने पोतों को खरीद लिया। वह अपनी पत्नी चन्द्रलेखा और उनको साथ लेकर, उस आश्रम में गया, जहाँ उसका लड़का रहा करता था। तारावलोक अपने पिता को आता देख, भागा भागा आया, वह उनके पैरों पर जा पड़ा।

आश्रम में जब मिल मिलकर, वे बातें कर रहे थे, तो आकाश में से, लक्ष्मी देवी, एक हाथी के साथ वहाँ उतरी। उसने तारावलोक से कहा—"इस हाथी पर सवार होकर विद्याधर लोक में जाओ। दान की महिमा के कारण, विद्याधर के सम्राट के पद प्राप्त किया है। तुम उस पद का आनन्द करो और आराम से रहो।"

तारावलोक, पत्नी और पुत्रों के साथ, माँ बाप के चरण छूकर, लक्ष्मी के साथ उस हाथी पर सवार हो गया। आश्रमवासी यह देख चकित रह गये। उनके सामने वह हाथी, तारावलोक, माद्री, राम, लक्ष्मण, लक्ष्मी देवी को सवार करके, विद्याधरो के राजाओं के साथ, आकाश में चला गया।

राज्य लोभी

व्याघ्रपाद और सत्यशेखर दो राजकुमार एक ही गुरु के यहाँ पढ़ते बड़े मिल जुलकर रहते थे। उन दोनों ने एक दिन समझौता किया—"हम शिक्षा समाप्त करके अपने देश चले जायेंगे और अपना अपना राज्य कर रहे होंगे, तो यह स्नेह बहुत दिन तक नहीं रहेगा। इसलिए हम में से जिसके पहिले लड़का होगा, वह दोनों राज्यों पर राज्य करे, इसकी सन्धि हम अभी से कर लेते हैं।"

दोनों की शिक्षा समाप्त हुई। दोनों का विवाह हुआ। कुछ दिनों बाद, व्याघ्रपाद की पत्नी गर्भवती हुई। व्याघ्रपाद ने कई ज्योतिषियों से पूछा कि उसकी पत्नी के क्या बच्चा होगा। जब ज्योतिषियों ने देखा कि जिस किसी ने लड़की कहा था, राजा उसे घूर रहा था, तो वे कहने लगे कि लड़का ही पैदा होगा। व्याघ्रपाद की पत्नी के लड़का पैदा होनेवाला था, यह बात निश्चित रूप से कही सुनी जाने लगी। परन्तु व्याघ्रपाद की पत्नी ने लड़की को जन्म दिया। यह सुन वह बड़ा निराश हुआ। दुनिया को धोखा देने के लिए उसने दायी दासियों को धमकाकर उनसे कहलवाया कि उसके लड़का ही पैदा हुआ था। उसने उसका नाम विजय रखा और नामकरण संस्कार में सत्यशेखर को भी निमन्त्रित किया। सत्यशेखर अपने मित्र के लड़का हुआ था, यह जानकर आया और अपना राज्य उस शिशु को देकर वह चला गया। व्याघ्रपाद के धोखे में उसका मित्र आ गया।

रामशर्मा

उसी समय विदिशा नगर के राजा, मृगोकदत्त के पुरुष राशी में, पुरुष ग्रह में पुरुष लग्न में एक लड़की पैदा हुई। उसका नाम धीर ललिता रखा गया। मृगोकदत्त के और कोई सन्तान न थी। इस लालच से कि धीर ललिता को बहु बना लेने से, विदिशा राज्य भी उसका हो जायेगा व्याघ्रपाद ने कहा कि वह अपने "लड़के" के साथ धीर ललिता का विवाह कर देगा। मृगोकदत्त इसके लिए मान गया। धीर ललिता अभी छोटी थी कि उसका विजय के साथ विवाह कर दिया गया।

धीर ललिता ज्यों ज्यों बड़ी होती जाती थी, त्यों त्यों उसमें स्त्री लक्षणों की अपेक्षा, पुरुष लक्षण अधिक होते जाते थे। जब उसे ख्याल आता कि वह किसी की पत्नी थी, उसे बड़ा बुरा लगता। उसे गहनों से भी नफरत थी। बिना किसी की परवाह किये वह हमेशा पुरुषों के साथ घूमा फिरा करती। जब सहेलियाँ कहतीं कि ऐसा करने से उसकी बदनामी होगी, तो वह बिगड़ती।

व्याघ्रपाद ने चूँकि अपनी लड़की को "लड़का" बता रखा था, अपने भेद को अधिकाधिक समय तक छुपाने के लिए

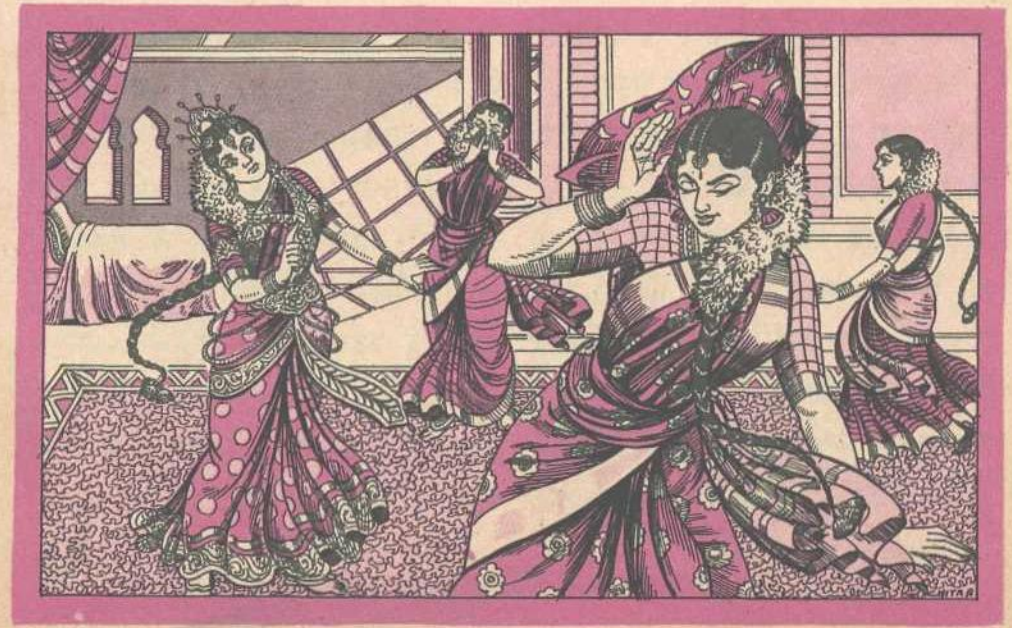

बहु को अपने घर नहीं बुलवाया। मृगोकदत्त की चूँकि वह इकलौती सन्तान थी, इसलिए उसने सोचा कि क्या जल्दी है, जब वे बुलायेंगे, तभी भेज देंगे।

पर उसने अपनी लड़की में, स्त्रीत्व के लक्षण लुप्त होते देख, ससुराल के नाम पर ही वह चिढ़ती थी यह जानकर मृगोकदत्त ने अपनी लड़की को, उसके ससुराल भेजने की सोचकर, यह बात अपने लड़की से कही।

"मेरा कौन पति है? मैं भला क्यों गृहस्थी करने जाऊँ? छी छी" धीर ललिता ने कहा। पिता ने क्रुद्ध होकर कहा—"क्या हमारी इज्जत मिट्टी में मिलाओगी?" उसने अपनी लड़की को धमकाया।

"मैं इज्जत की बात नहीं जानती। मैं मर जाऊँगी, पर अपने पति के पास नहीं जाऊँगी। यह बात पक्की है।" धीर ललिता ने कहा।

"मैं यह बदनामी नहीं चाहता कि तुम-सी मेरी लड़की है। तुम्हें मार देना ही अच्छा है।" मृगोकदत्त ने कहा।

"यदि तुमने निरपराध को मरवाया, तो तुम्हारी बदनामी होगी ही। मैं पहिले तुम पर बाण छोड़ती हूँ। तुम उस अपराध

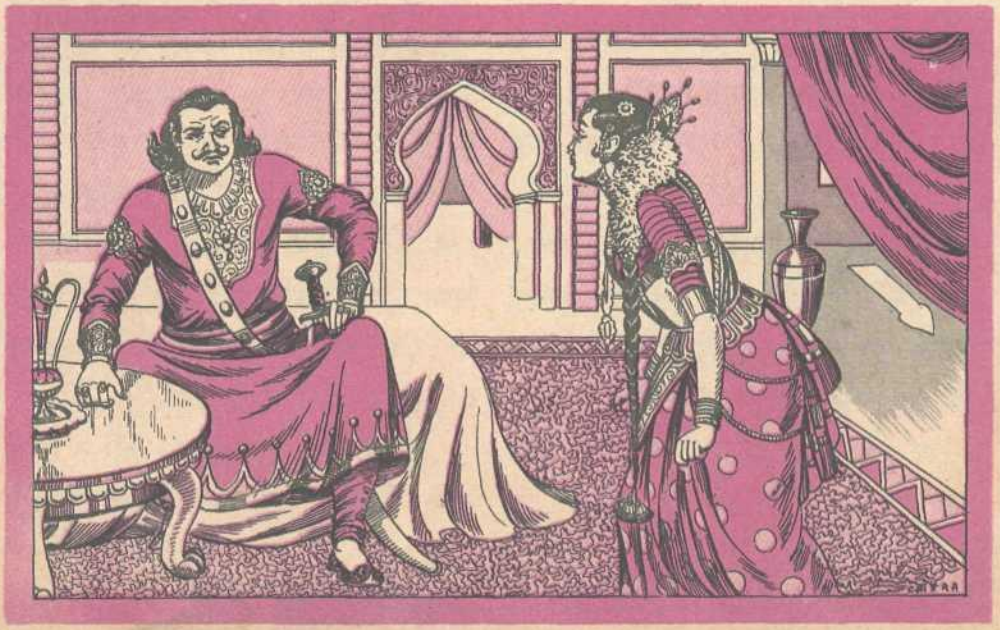

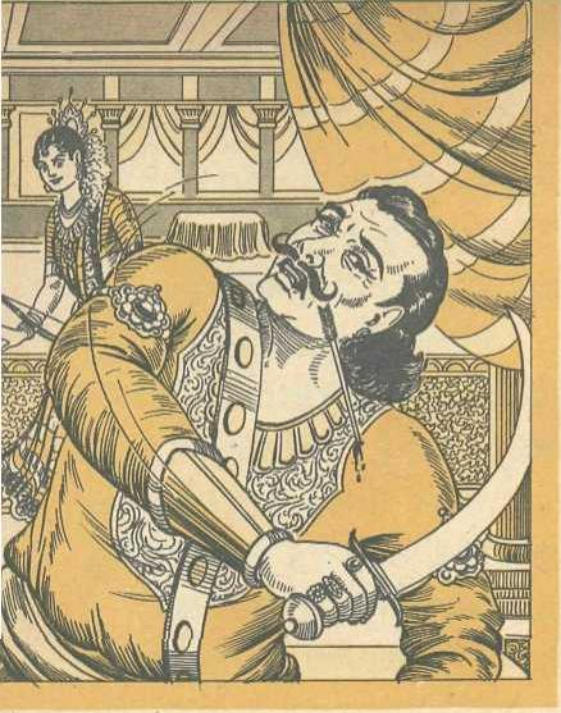

में मुझे मौत की सज़ा दे देना। तुम्हें तब पाप न लगेगा और तुम्हारी इच्छा भी पूरी हो जायेगी।" कहती धीर ललिता कुछ दूर गई, धनुष बाण लाकर, एक बाण धनुष पर चढ़ाकर, धीमे से खींचकर पिता पर छोड़ दिया। पर इतने भर से मृगोकदत्त को बड़ी जबर्दस्त चोट लगी। उसे अपनी लड़की के बल पर आश्चर्य हुआ। उसने उस पर छुरी फेंकी। इस चोट से धीर ललिता मरी तो नहीं, पर उसका स्त्रीत्व जाता रहा और वह पुरुष बन गई। धीर ललित बन गई। उस असाधारण परिवर्तन को देखकर सबको बड़ा विस्मय हुआ। कई बड़े खुश हुए। धीर ललित युवराज ही नहीं, असाधारण बल पराक्रम दिखाकर, वह अपने पिता की सारी सेना का अधिपति भी बन गया।

ये सब बातें, जब व्याघ्रपाद के पास पहुँची, तो न मालूम उसमें कहाँ से धीरज आया कि उसने मृगोकदत्त को चिट्ठी लिखवायी। "यह सोच कि आपके एक ही लड़की है इतने दिन उसको आपके घर ही रहने दिया। सयानी लड़की का माईके में अधिक दिन रहना अच्छा नहीं है। उसे तुरत, ससुराल भेजिये।"

यह जगह जगह मालूम हो गया था कि मृगोकदत्त की लड़की, लड़का बन गई थी। वह इतनी शूर हो गई थी कि पिता के दाहिने हाथ के बराबर थी। उस हालत में मृगोकदत्त ने सोचा, यह खबर व्याघ्रपाद के पास भी पहुँची होगी। उसने उसका अपमान करने के लिए ही यह चिट्ठी लिखी थी। मृगोकदत्त ने सच सच, व्याघ्रपाद को सूचित करवा दिया।

व्याघ्रपाद ने युद्ध घोषणा भी न की। उसने विदिशा नगर पर अपनी सेना के

साथ आक्रमण कर दिया। मृगोकदत्त की सेनायें, हमेशा युद्ध के लिए सन्नद्ध रहती थीं। नगाड़ा बजते ही चारों सेनायें, नगर के चारों ओर युद्ध के लिए सन्नद्ध होकर, तैनात हो गईं।

धूर्त व्याघ्रपाद ने मृगोकदत्त के पास यह सन्देश भेजा—"क्या तुम में नीति और अभिमान नहीं है? अपने लड़के को लड़की बताकर, मेरे लड़के के साथ उसका विवाह करके, मेरा राज्य हड़पना चाहते थे? ऐसा करते हुए तुम्हें शर्म भी न आयी। जो कुछ हुआ है, उसके लिए माफ़ी माँग लो और अगर, तुमने अपना राज्य हमें सौंप दिया, तो मैं तुम्हें जीवित छोड़ दूँगा। नहीं तो, भयंकर युद्ध में, तुम्हारा नामों निशाँ नहीं छोड़ूँगा।"

इसके उत्तर में मृगोकदत्त ने धीर ललित को युद्ध के लिए भेजा। धीर ललित् के युद्ध के लिए निकलते ही नगर का हर व्यक्ति कोई न कोई आयुध लेकर, उसके साथ युद्ध के लिए निकल पड़ा।

दोनों पक्षों में युद्ध हुआ। धीर ललित के बाण से, व्याघ्रपाद अपने हाथी पर से गिर गया। धीर ललित ने उसका किरीट

फेंक दिया। उसके केश पकड़कर उसने पूछा—"क्या सन्देश भेजा था? तुम्हें मार देने में कोई फायदा नहीं है, मेरे पिता की आज्ञा है कि तुम्हें जीवित लाया जाये।" कहकर, वह उसको अपने पिता के पास ले गया और उसे पिता के पैरों पर फेंक दिया।

मृगोकदत्त ने व्याघ्रपाद को उचित आसान पर बिठाकर कहा—"राजा को अपना बल और प्रतिपक्षी के बल के बारे में मालूम होना चाहिए। यह सोच कि बड़े बलशाली हो, तुमने बड़ी शेखियाँ मारीं,

तुम प्राण चाहते हो? या बहु? डरो मत। जैसे तुमने, निर्भीक हो सन्देश भेजा था, उसी तरह कहो।"

पास ही खड़े धीर ललित ने कहा—"आपने लाने के लिए कहा था। इसलिए इस पशु को आपके सामने लाया हूँ। परन्तु इसको दण्ड तो तभी मिलता जब कि इसका सिर काट दिया जाता। इस तरह के शत्रुओं का मटियामेट कर देना चाहिए।" यूँ कहते कहते उसने अपनी तलवार उठायी।

तुरत व्याघ्रपाद ने मृगोकदत्त के पैरों पर पड़कर कहा—"आप मेरे हमले के बारे में भूल जाइये। हमारा सम्बन्ध न बिगाड़िये। मैं आपके यहाँ से बहू नहीं, दामाद चाहता हूँ। मेरे लड़का नहीं है। विजया मेरी लड़की है। उसे आप अपने यहाँ बुलाइये। आप यह भूल जाइये कि वह मेरी लड़की है। उसे अपनी बहू समझिये। राज्य के लालच से मैंने अपने प्राण मित्र को धोखा देकर, उसका राज्य हड़पा। आपका राज्य भी हड़पना चाहा। मैंने जो कुछ पाप किये हैं, उसके लिए मुझे माफ़ करें।" वह रोने पीटने लगा।

मृगोकदत्त ने सत्यशेखर के पास और व्याघ्रपाद के घर खबर भेजकर उनको बुलवाया। सत्यशेखर यह जानकर कि उसके बचपन के मित्र ने उसे धोखा दिया था, अपना राज्य वापिस ले लिया। धीर ललित ने व्याघ्रपाद की लड़की को अपनी पत्नी के रुप में स्वीकार कर लिया। क्योंकि पत्नी पति बन गयी थी और पति पत्नी। उन दोनों का शास्त्रोक्त रीति से विवाह कर दिया गया। सब सुख से रहने लगे।

चोर के पीछे चोर

एक राजा के रत्नवती नाम की लड़की थी।

चूँकि उसके कोई और सन्तान न थी और वह अत्यन्त सुन्दर थी, राजा उसके लिए हर तरह के आभूषण खरीदकर दिया करता। रत्नवती, जब उन रत्नों को पहिनती तो ऐसा लगता जैसे उसके कारण वे और अधिक सुन्दर हो गये हों।

एक बार नगर में कुछ जौहरी आये। रत्नवती रत्नों के चुनने में बड़ी चतुर थी। उसने उन जौहरियों के पास से एक हीरा चुना। सचमुच वह बड़ा प्राचीन हीरा था। कई युगों से कई सम्राट उसको अपने किरीट में रखते आये थे। उसके लिए युद्ध और दिग्विजय आदि हुए थे। पर सौ वर्ष तक वह मिट्टी के ढ़ेर में पड़ा रहा। रत्नवती ने उसे खरीद लिया। उसे शिराभूषण में जड़वाकर हमेशा अपने सिर पर पहिने रहती। वीरदास नाम के चोर को उस हीरे के बारे में मालूम हुआ। वह उसे चुराने के लिए रत्नवती के नगर में आया। वह बहुत समय से बहुत-से साहसिक कार्य करता आया था, कई राजाओं के खजाने उसने लूटे थे। उसने कई रूप बदले थे और कितने ही देशों में चोरी की थी, पर उसको किसी का पकड़ना तो अलग, कोई उसे पहिचान भी न पाया था।

वीरदास ने बहुत कोशिश की, पर बिना रत्नवती को उठाकर ले जाये उस हीरे को चुराना असम्भव-सा था चूँकि वह उसे हमेशा अपने सिर पर रखती थी। आखिर, एक दिन चोर, रत्नवती के शयनकक्ष में जा घुसा। उसने रत्नवती को बेहोश कर

दिया। उसे वन के बीच में, अपने गुप्त घर में ले गया।

राजा अपनी लड़की के उठाये जाने पर बड़ा दुखी हुआ। राज सैनिकों ने बहुत खोजा, पर वे उसका पता न जान सके। इसलिए राजा ने कई देशों में घोषणा करवा दी कि जो कोई उसकी लड़की लायेगा, उसका उसके साथ विवाह कर देगा और अपना राज्य भी उसे दे देगा।

जब एक देश के राजकुमार जयन्त को इस घोषणा के बारे में मालूम हुआ, तो उसने रत्नवती का पता जानने का निश्चय किया। वह बड़ा चतुर ही नहीं, सुन्दर भी था। सुन्दर राजकुमारी से विवाह करने के उद्देश्य से वह कई देश घूमा भी था। जो जो राजकुमारियाँ सुन्दर समझी जाती थीं, उसे बिलकुल न जँची थीं।

ऐसी हालत में उसने घोषणा सुनी और रत्नवती के बारे में जानकारी हासिल की। हर किसी ने बताया, उस जैसी सुन्दरी कहीं न थी। पर उसको, आश्चर्य उसके सौन्दर्य पर न था—उसको कोई उठा ले गया था और वह कहाँ थी, यह कोई जान नहीं पा रहा था, वह ऐसा काम

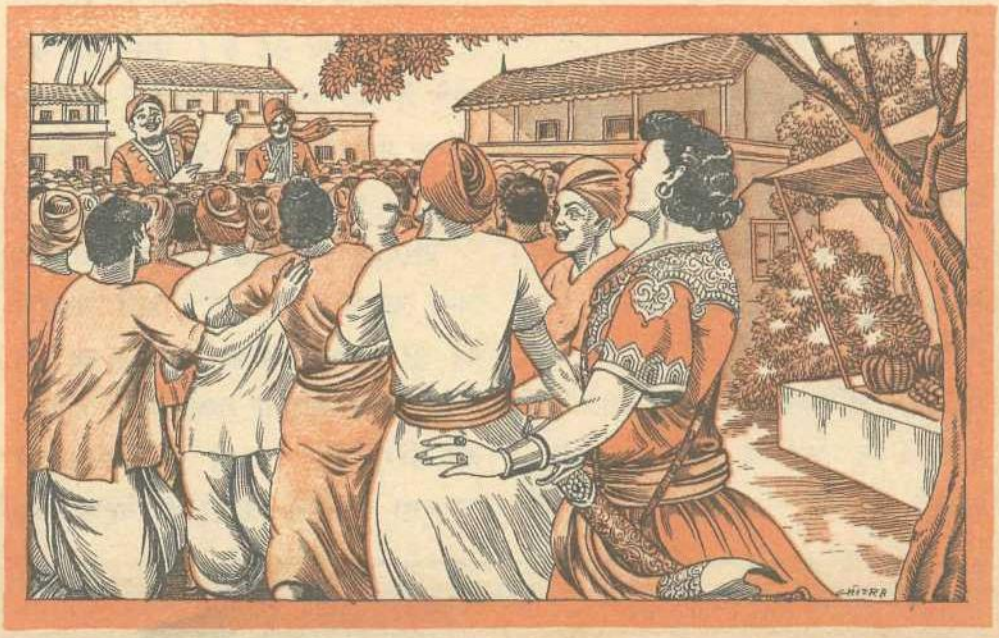

"जो काम एक चोर कर सकता है, वह दूसरा भी कर सकता है।"

यह भी कुछ समय पहिले वहाँ न थी—उससे भी बढ़कर कोई चोर वहाँ आ घुसा था।

वीरदास ज़ोर से चिल्लाया—"कौन हो तुम? मेरे सामने आओ।"

जयन्त बाहर से अन्दर आया। उसके पीछे रत्नवती भी आयी।

"वाह, तुम छोटी माँ के लायक हो।" वीरदास ने मन में सोचा। ऊपर से पूछा—"तुम कौन हो?"

"मैं हूँ। बड़े हो, तुम्हें मुझे पकड़ने की कोशिश करता देख, मैं ही तुम्हारे सामने चला आया।" जयन्त ने कहा।

वीरदास यह जानकर बड़ा खुश हुआ कि जिस चोर को वह पकड़ना चाहता था, वह वह नवयुवक ही था। छोटी माँ का उससे विवाह करने के लिए, वह सहर्ष मान गया।

"फिर हमारे विवाह में शामिल होने के लिए बहुत-से बन्धु-बान्धव हैं। मेरा राज्य भी है। रत्नवती से विवाह करने से एक और राज्य भी मिलेगा। इसलिए तुम मेरे साथ आओ और मेरी तरफ़ से विवाह के समय मुखियागिरी करो।" जयन्त ने वीरदास से कहा। उसे निमन्त्रित किया और उसे अपने साथ ले गया।

रत्नवती और जयन्त का वैभवपूर्वक विवाह हो गया। रत्नवती के पति को देखकर, उसका असली पिता खुश तो हुआ, पर छोटी माँ को ऐसा पति मिलने पर, वस्तुतः गर्व करनेवाला चोर वीरदास था।

अपराधी कौन

राजा की लाड़ली दुलारी लड़की, अपनी सहेलियों के साथ टहलने गई। अपने आभूषण निकालकर उसने सरोवर के तट पर रखे। उनकी रखवाली के लिए एक दासी को रखकर, वह जलक्रीड़ा में तल्लीन हो गई।

दासी ऊँघ रही थी कि कोई ध्वनि हुई और उसने घबराकर जो आँखें खोलीं, तो राजकुमारी के आभूषणों में चन्द्रहार वहाँ न था। उसे राजा ने अपनी लड़की के जन्मदिवस पर बड़े प्रेम से दिया था। दासी ने जब इधर उधर मुड़कर देखा, तो उसे कोई पेड़ों के पीछे भागता लगा। तुरत वह "चोर, चोर, चन्द्रहार" चिल्लाई। राजकुमारी और सहेलियाँ पानी में से निकलीं। वे भी चिल्लाईं—"चोर चोर, चन्द्रहार ले गया है।" उद्यान के नौकर दासी ने जिस ओर ईशारा किया, उस ओर चोर को पकड़ने के लिए भागे।

"चोर....पकड़ो...." जब उसने चिल्लाना सुना, तो उद्यान के बाहर घूम रहा एक किसान, भागने लगा। सैनिकों में से एक दीवार फाँदकर, उसके पीछे भागने लगा। पर कुछ देर बाद किसान घरों के पीछे छुप गया।

उस सैनिक ने राजा के पास जाकर कहा कि जिस चोर ने चन्द्रहार चुराया था, उसे स्वयं उसने देखा था, और उसे वह पहिचान सकता था। पकड़ सकता था। राजा का मन कुछ हल्का हुआ।

सैनिक भी तेज़ था। अगले दिन उसने उस किसान को एक सेठ के घर के आँगन में काम करते देखा। उसे उसने पहिचान

करना चाहता था, जो और कोई कर नहीं पाया था। रत्नवती, यदि सुन्दर है तो उसके बिना कहे ही उसका विवाह कर दिया जायेगा। यदि जंची नहीं तो विवाह करने की कोई शर्त नहीं है। परन्तु एक बात जयन्त अच्छी तरह जान गया था। जो रत्नवती को उठा ले गया था, वह जबर्दस्त चोर था, यदि उस चोर के बारे में मालूम हो गया, तो उसके बारे में भी मालूम हो जायेगा।

इस बीच, रत्नवती उस गुप्त घर में, राजकुमारी की तरह रह रही थी। जब से वीरदास ने उसे देखा था, उसको उस पर वात्सल्य उभर आया था। वह उसे अपने प्राणों से भी अधिक चाहने लगा और उसको सन्तुष्ट करने के लिए तरह तरह के कष्ट उठाने लगा। उसके लिए वह "छोटी माँ....सी" थी। वह उसको कोई तकलीफ़ न होने देता।

कुछ दिनों में रत्नवती अपने असली पिता को भूल गई। वीरदास को उससे अधिक चाहने लगी। उस घने जंगल के बीच में भी उसे किसी चीज़ की कमी न थी। राजमहल की अपेक्षा, उसे जंगल ही भाया।

जल्दी ही वीरदास ने एक दामाद भी पाने की सोची। वह उस "छोटी माँ" की शादी, किसी सुन्दर राजकुमार से करना चाहता था। उसने कई देशों के कई राजकुमारों को देखा, पर उनमें से कोई भी उसको "छोटी माँ" के योग्य न लगा। इसलिए, वीरदास रत्नवती के लायक वर को खोजने के लिए निकल पड़ा।

वीरदास जब एक देश में गया, तो पिछली रात को ही वहाँ एक अजीब चोरी हुई थी। आधी रात के समय कोई "चोर" अन्तःपुर में चला गया। एक दासी के सिर के नीचे गहनों की पोटली रखकर, पहरेदारों को चकमा देकर चला गया। वे गहने राजा के खजाने के थे।

इसके बाद अगली रात को रानी के गले का हार मन्त्री की पत्नी के गले में था। इस तरह कई चीज़ें, जो बहुत ही सुरक्षित रखी जाती थीं एक और जगह दिखाई देने लगीं।

यह जो कर रहा रहा था, उसे "चोर" तो नहीं कहा जा सकता था, पर यदि वह चाहता, तो बड़ी से बड़ी चोरी कर सकता था। इसलिए उस देश का राजा घबरा गया। उसने घोषणा करवायी कि जो कोई उस "चोर" को पकड़ेगा, उसे बहुत-सा ईनाम दिया जायेगा।

वीरदास ने जब इस "चोर" के बारे में सुना, तो मन ही मन उसने उसकी प्रशंसा की। ईनाम की बात अलग, यदि उसने इतने चतुर चोर को पकड़ा, तो उसका बड़ा चोर होना, कुछ मतलब रखता था। चोर को चोर ही पकड़ेगा।

ये चोरियाँ जयन्त ने की थीं, उसके कारनामों के बारे में यदि कोई बड़ा चोर सुनेगा, तो उसको पकड़ने की कोशिश

किये बगैर नहीं रहेगा। जब यह मालूम हो जायेगा कि कौन उसका पीछा कर रहा था, तो अपने आप रत्नवती का पता भी मालूम हो जायेगा। इसलिए वह जानने की कोशिश कर रहा था कि कौन उसका पीछा कर रहा था। उसको जल्दी ही वीरदास पर सन्देह हुआ। वह जान गया कि जहाँ जहाँ "चोरी" की थी, वहाँ वहाँ वीरदास भी पहुँच रहा था। वीरदास उसका पता मालूम करने के लिए ज़मीन आसमान एक कर रहा था। जयन्त ने जब वीरदास के बारे में जानने की कोशिश की, तो कोई भी उसका पता ठीक ठीक न बता सका, इसलिए जयन्त उसका पीछा करने लगा।

उस शहर में कुछ दिन रहकर वीरदास जब अपनी "छोटी माँ" को एक बार देख आने के लिए जाने लगा, तो जयन्त चुपचाप उसके पीछे जंगल में गया। वहाँ वह, वीरदास के वापिस जाने तक रहा और जब वह चला गया, तो उसने उसके गुप्त गृह में प्रवेश किया। वहाँ रत्नवती को देखते ही, वह चकित खड़ा हो गया। उतनी सुन्दर स्त्री की कभी उसने कल्पना

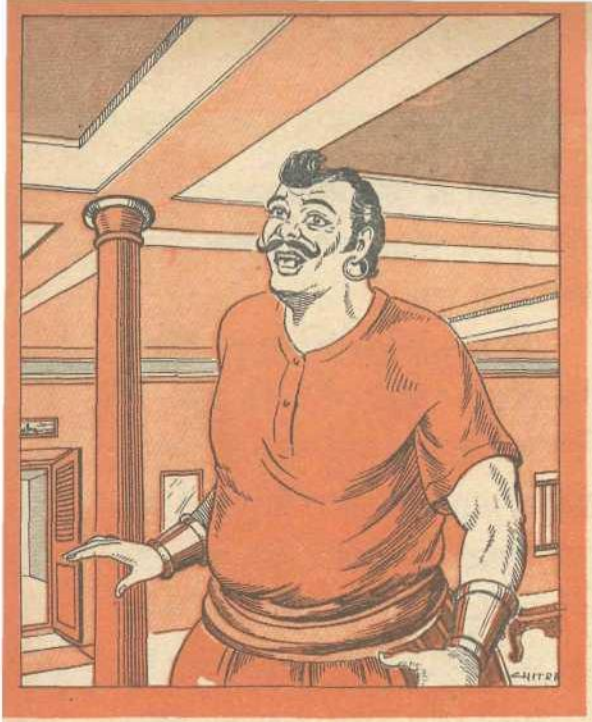

भी न की थी। रत्नवती को भी, जयन्त को देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ।

बातों बातों में जयन्त जान गया कि कि वह ही रत्नवती थी और जो चोर उसे उठाकर लाया था, उसने वात्सल्यवश उसको अपने यहाँ रख लिया था। वह भी, उस चोर को पिता की तरह देख रही थी।

"तुम्हारे बारे में सुनकर, तुमसे शादी करने के लिए मैंने बहुत कोशिश की। चलो तुम्हारे देश चलें। मेरे साथ आओ।" जयन्त ने रत्नवती से कहा।

"बाप रे बाप, यदि हमने यह किया, तो वीरदास दिल फटकर मर जायेगा। यदि वह तुम्हें देख ले और तुम, उसको पसन्द आ गये, तो शादी होगी, नहीं तो नहीं।" रत्नवती ने कहा।

"यदि वह मान गये, तब तो तुम्हें तो कोई आपत्ति नहीं है।" जयन्त ने पूछा।

"नहीं।" रत्नवती ने लजाते हुए कहा।

जयन्त, वीरदास की प्रतीक्षा करता वहीं रह गया। दो दिनों बाद वीरदास, निराश हो घर आया, चूँकि उसे लग रहा था कि चोर शहर छोड़कर चला गया था। दो तीन दिनों से, कहीं कोई चोरी न हुई थी।

वीरदास जब घर आया, तो वह सूनसान-सा था। कहीं रत्नवती का पता न था। वीरदास न जान सका कि वह कहाँ चली गई थी। वह लड़की, जो हमेशा, उसकी राह जोहती रहती थी, स्वयं कहीं न जायेगी। उसे कोई उठा ले गया होगा।

वीरदास ने "छोटी माँ" चिल्लाते, सारा घर छान डाला। आसपास का जंगल भी देख आया। जब वह घर वापिस आया, तो देखा कि रत्नवती के बिस्तर पर, एक चीट रखी हुई थी। उस पर लिखा था—

सत्यवादी

एक दिन काफ़ी रात हुए कोई दुन्डा पन्नालाल का घर ढूँढ़ता हुआ आया। उसने पन्नालाल से कहा—"हुज़ूर, मेरा कोई विश्वासपात्र नहीं है। इसलिए आप मेरा एक उपकार कीजिए।"

"हाँ, हाँ, हो सका, तो अवश्य करूँगा। बताओ, क्या चाहिए?" पन्नालाल ने पूछा।

उसका नाम रामलाल था। उसका गाँव पास ही था। उस रामलाल का एक भाई था, जिसका नाम कोदण्डराम था। वह उस ग्राम के धनिकों में एक था। रामलाल का छुटपन में ही पेड़ पर से गिर जाने कारण हाथ टूट गया था। तब से कोदण्डराम भाई को घर में ही रखकर नौकर की तरह देख रहा था। कभी कभी वह भाई को याद भी दिलाया करता कि दुन्डे के लिए भीख माँगकर ज़िन्दगी बसर करने के और कोई रास्ता न था।"

रामलाल की माँ, अपनी छोटे लड़के के बारे में बड़ी दुःखी रहा करती। वह जान गई कि उसके मरते ही, कोदण्डराम रामलाल को घर से बाहर निकाल देगा। इसलिए उसने रामलाल के लिए सौ मोतियाँ इकट्ठी करके, उसको देते हुए कहा—"इन्हें कहीं रख लो। तकलीफ़ के समय तुम्हारे काम आयेगी।"

रामलाल के सामने अब यह समस्या थी कि वह धन किसके पास रखा जाये। वह किसी का विश्वास नहीं कर सकता था। यदि किसी और के पास धन रखवाता, तो उसके भाई को मालूम हो जाता। कोई ऐसा न था, जो कोदण्डराम

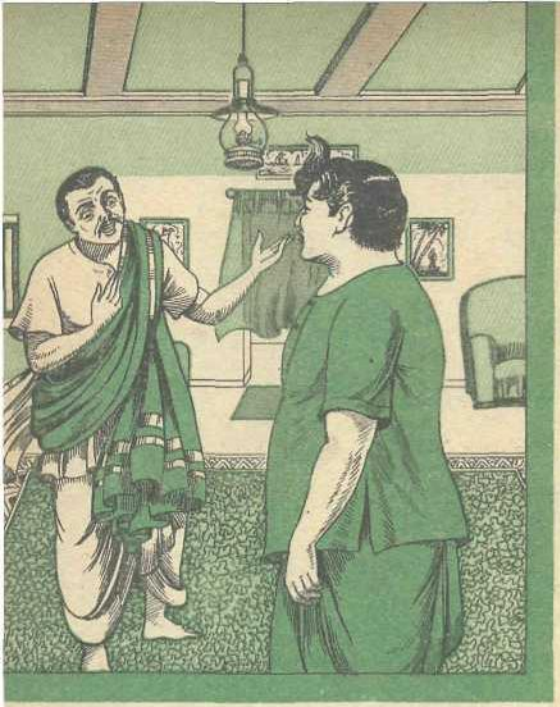

की परवाह न करके, रामलाल की सहायता करे। इसी उधेड़बुन में रामलाल को पन्नालाल याद हो आया। पन्नालाल की मदद माँगने, वह रात के समय आया था। रामलाल ने, पन्नालाल को अपनी परिस्थिति बताकर कहा—"आप यह पैसा तो अपने पास रखिये ही, यह भी देखिये कि इसके बारे में मेरे भाई को कुछ न मालूम हो। नहीं तो मुझे फिर ये न मिलेंगी।"

कोदण्डराम के बारे में और उसके टुन्डे भाई रामलाल के बारे में पन्नलाल ने पहिले ही सुन रखा था। इसलिए रामलाल की बातों में उसको भरोसा हो गया। "तुम बेफिक्र रहो कि तुम्हारे धन के बारे में, तुम्हारा भाई मुझसे नहीं जान सकेंगे। अगर तुम्हारे भाई ने आकर पूछा कि मैं तुम्हें जानता हूँ कि नहीं, तो मैं साफ कह दूँगा कि मैं तुम्हें जानता भी नहीं हूँ। जब, जब तुम्हें पैसे की ज़रूरत हो, तुम लेते रहना।" पन्नालाल ने यह कहकर, रामलाल को भेज दिया।

पर जैसा कि रामलाल को भय था, वैसा ही हुआ। कोदण्डराम को मालूम हो गया कि उसके भाई ने पन्नालाल के गाँव जाकर, उसके पास कुछ पैसा रखवाया था। अगले दिन उसने पन्नालाल के पास आकर कहा—"मालूम हुआ है कि मेरे भाई ने तुम्हारे पास कुछ रुपया रखवाया है। आपके लिए यह करना बिल्कुल ठीक नहीं है। अगर पाँच दस को इसके बारे में मालूम हो गया, तो वे क्या सोचेंगे? वे लोग कहेंगे कि मैंने भाई को ठगा है। अगर उसका पैसा मेरे पास रहा तो क्या मैं उसे खा जाऊँगा? वह आप मुझे दे दीजिये।"

"आप क्या कह रहे हैं, मुझे कुछ नहीं मालूम। आपका भाई मेरे पास आया ही

नहीं। मेरे पास उसने पैसे भी नहीं रखवाये।" पन्नालाल ने कहा।

कोदण्ड ने सपने में भी न सोचा था कि पन्नालाल झूट बोलेगा। परन्तु कोदण्ड जानता था कि पन्नालाल ने जो कहा था, वह सच न था। उन लोगों ने ही कोदण्ड को यह बताया था, जिन्होंने अपनी आँखों रामलाल को पन्नालाल के घर जाते देखा था।

कोदण्ड, पन्नालाल का कुछ न बिगाड़ सका। पर लोगों में प्रचार करने लगा कि पन्नालाल झूटा था। परन्तु किसी ने कोदण्ड की बातों पर विश्वास न किया। सब का यही विश्वास था कि पन्नालाल कोई बुरा काम न करता था।

परन्तु जल्दी ही एक ऐसा मौका आया जिससे यह स्पष्ट होने लगा कि पन्नालाल असत्यवादी था। यह इस प्रकार हुआ।

कोदण्ड के ग्राम के पास, एक जंगल में, एक नाले में एक साधु को, एक देवता की मूर्ति मिली। वह साधु गाँवों में नहीं आता था। इसलिए उसने उस मूर्ति को एक जगह सुरक्षित रखा और जब कुछ चरवाहे गौ भैसों को वहाँ चराने आये, तो

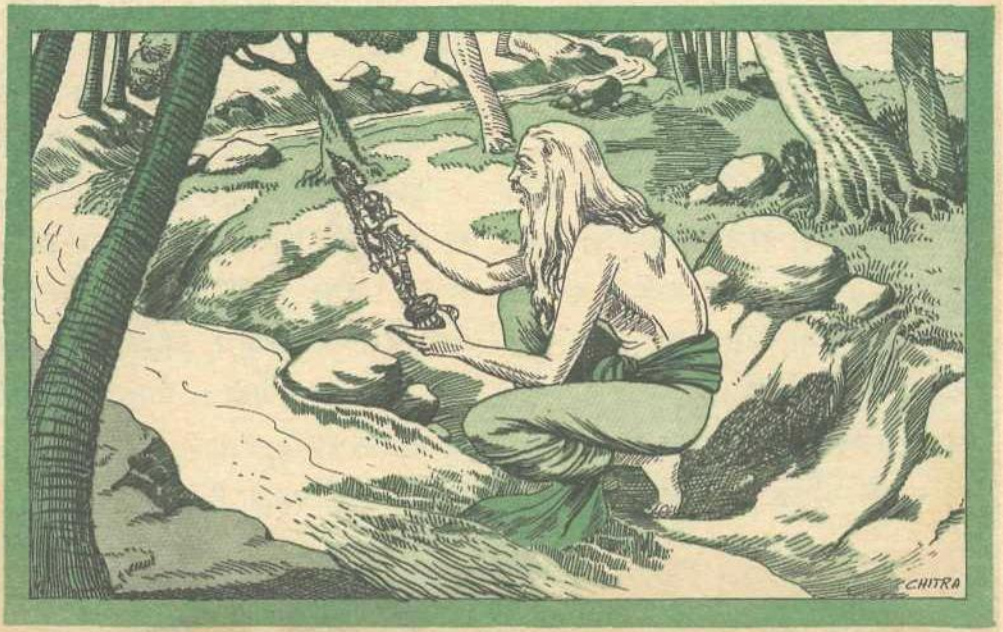

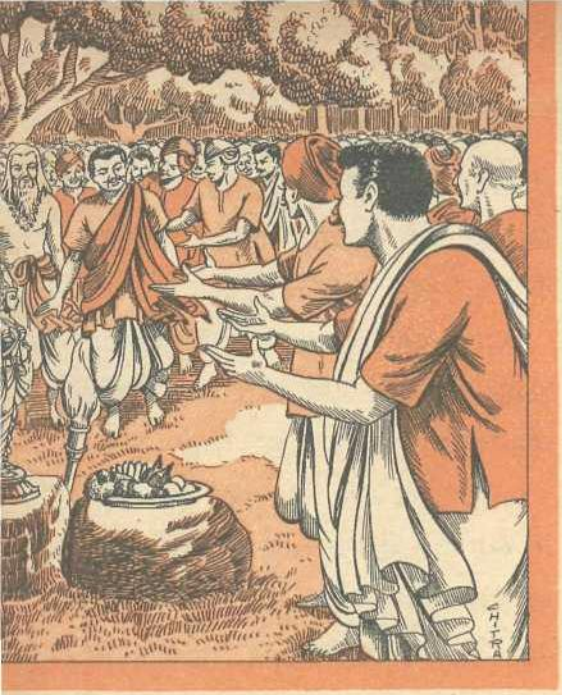

उसने उनसे कहा—"मुझे एक देवता की मूर्ति मिली है। उसे तुम्हारे गाँववालों को ले जाना चाहिए। उसकी प्रतिष्ठा करके, मन्दिर बनाकर, पूजा करनी चाहिए। नहीं तो तुम्हारे गाँव का अहित होगा।

यह बात गाँव के बड़े बुजुर्गों को मालूम होते ही, उन्होंने मन्दिर बनवाने का निश्चय किया। उन्होंने मन्दिर बनवाने के लिए जगह भी देखी और चन्दा इकट्ठा करने लगे। कोदण्ड जैसे अमीरों ने यह काम अपने कन्धों पर ले लिया। कोदण्ड ने ही सब से अधिक चन्दा दिया। मूर्ति की प्रतिष्ठा के लिए पीठ भी तैयार हो गया। मूर्ति को लाने के लिए गाँववाले बाजे गाजे के साथ स्वामी के पास गये।

पूजारी जब शुद्ध होकर, उस मूर्ति को उठाने गया तो उसके हाथ जल गये। वह दर्द के कारण चिल्लाया।

"यह पवित्र मूर्ति है। इसे सत्यव्रत और पुण्यात्माओं के अतिरिक्त कोई नहीं छू सकता।" साधु ने कहा।

"हम में इतना पुण्यात्मा कौन है? आप ही इस मूर्ति को गाँव तक कृपया पहुँचा दीजिये।" ग्रामवासियों ने साधु से निवेदन किया।

"मेरा नियम है कि मैं ग्रामों में प्रवेश नहीं करता। अगर आप में कोई ऐसा है, जिसे आत्म विश्वास हो वह इस मूर्ति को उठाकर ले जाये।" साधु ने कहा।

ग्रामवासी एक दूसरे की प्रशंसा करके, हर कोई दूसरे को अधिक पुण्यात्मा बताने लगा। परन्तु किसी ने भी मूर्ति छूने का साहस न किया। आखिर सब की दृष्टि कोदण्ड पर पड़ी। उनके प्रोत्साहन पर कोदण्ड सामने आया। उसने कहा—"मैं मूर्ति को उठाता हूँ।"

लिया। उसने कहा—"अरे, मिल गये, चोर तुम। उस चन्द्रहार का क्या किया?"

"चन्द्रहार? मुझे कुछ नहीं मालूम।" किसान ने कहा।

"जब तक फाँसी की सज़ा नहीं होती, तब तक तुम सच नहीं बोलेगे। चलो राजा के पास।" सैनिक उसको राजा के पास खींचकर ले गया।

राजा को देखकर वह किसान डर गया। बचाओ....बचाओ, हमारे सेठ ने वह चन्द्रहार लाने के लिए कहा था, मैंने उसे ले जाकर उसे दे दिया महाराज।"

राजा ने सेठ को बुलवाया। किसान ने कहा—"ये ही हमारे सेठ हैं। इन्हें ही मैंने चन्द्रहार दिया है।"

"चन्द्रहार? मैं तो कुछ नहीं जानता।" सेठ ने कहा। राजा की आँखें अंगारें बरसाती-सी लगती थीं। यह देख सेठ ने ज्योंहि मुँह मोड़ा तो, उसने राजा के पूजा गृह से, पुरोहित को सुनवाई की गड़बड़ी सुनते खड़े देखा। तुरत सेठ ने हाथ जोड़कर कहा—"महाराज, आप के पुरोहित ने जब चन्द्रहार माँगा, तो मैंने इस किसान से वह मँगवाकर उसे दे दिया।"

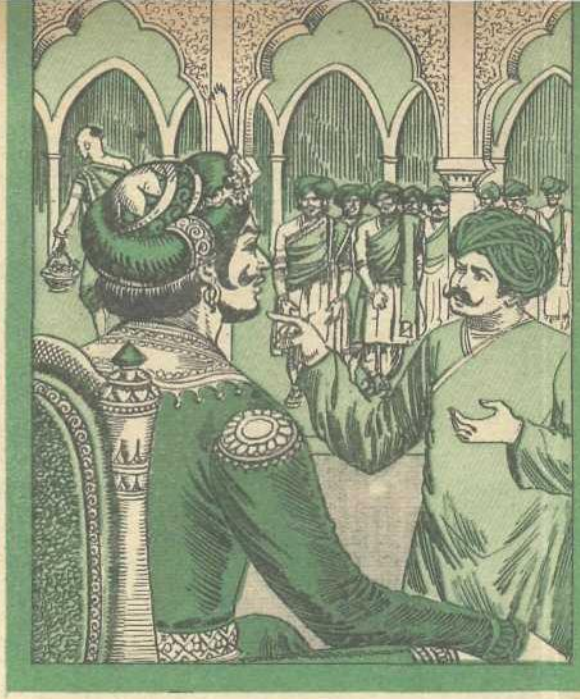

राजा ने पुरोहित को पास बुलाकर पूछा—"इस सेठ ने जो चन्द्रहार दिया था, वह कहाँ है? सच बताओ।"

"चन्द्रहार?" पुरोहित ने पूछा।

"इस किसान को राजकुमारी का चन्द्रहार उठाकर, भागकर जाते हुए इस सैनिक ने देखा था। वह मान गया है कि उसने उसे इस सेठ को दिया था और सेठ ने उसे आपको दिया था। क्यों?" राजा ने पूछा।

जब पुरोहित को न सूझा कि क्या कहे कि उसे उस तरफ़ भूतपूर्व वृद्ध मन्त्री आते

दिखाई दिये। तुरन्त पुरोहित ने कहा— "महाराज, सच है, मैंने कल रात लक्ष्मी पूजा के लिए चन्द्रहार सेठ से माँगा था। उन्होंने उसे मुझे लाकर दिया भी। उससे मैंने पूजा भी कर ली। आज सवेरे ही मैंने उसे भूतपूर्व मन्त्री को दे दिया था।"

इतने में वह वृद्ध मन्त्री वहाँ आ ही गया। राजा ने उससे चन्द्रहार के बारे में बताया। "वह चन्द्रहार कहाँ है, जो पुरोहित ने आपको दिया था?"

मन्त्री, किसान, सेठ और पुरोहित को देखकर, सब कुछ जान गया। वे अपनी रक्षा के लिए चोरी कबूल कर, दूसरों को फँसा गये थे। उसे भी किसी और को फँसाकर जाना होगा। उसने जो बाहर देखा, तो चार दीवारी पर एक बन्दर दिखाई दिया। उस वृद्ध ने राजा से कहा— "मैं उस चन्द्रहार को यहाँ ला रहा था कि एक बन्दर उसे लेकर भाग गया।"

राजा सन्तुष्ट हो गया। उसने अपने सैनिकों को आज्ञा दी कि केलों का लालच देकर बन्दरों को बुलायें और देख कि कौन बन्दर चन्द्रहार उठा ले गया था। जहाँ चन्द्रहार उठाया गया था, वहाँ उन्होंने केले और नारियल लाकर फेंक दिये। दूर दूर से बन्दर उनके लिए आये। उनमें से एक बन्दर ने चन्द्रहार गले में डाल रखा था। उसे सैनिकों ने उसके गले में से ले लिया और जाकर राजा को दे दिया।

पर यह बात न मालूम हो सकी कि वस्तुतः उस बन्दर ने वह चन्द्रहार उठाया था और जो कुछ किसान ने, या सेठ ने या पुरोहित ने, या मन्त्री ने कहा था, वह कल्पना मात्र था।

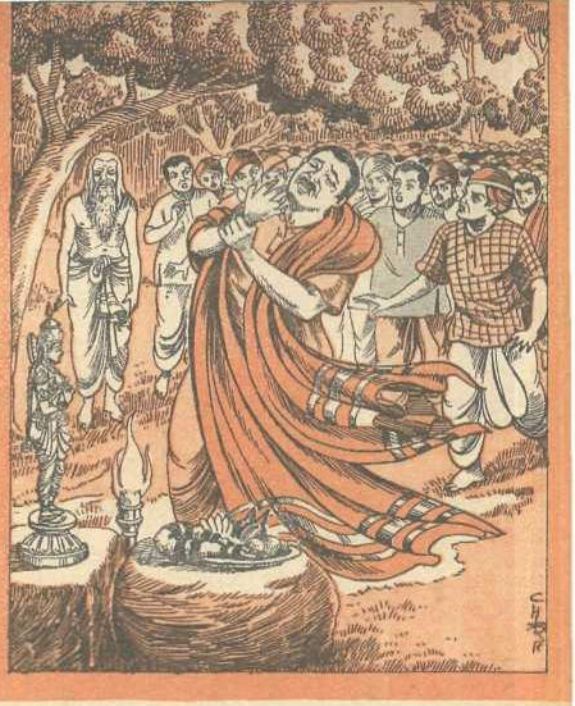

"तुमने पुण्य कार्य किये हैं न?" साधू ने पूछा।

"क्यों नहीं किये? इस देवता के लिए मन्दिर बनवाने के लिए मैंने ही सब से अधिक धन दिया है। मेलों पर मैं गरीबों को अन्न, वस्त्र, धन आदि दान में देता हूँ।" कोदण्ड ने कहा।

"झूट तो नहीं कह रहे हो?" साधु ने पूछा।

"अरे वाह, मैं तो कभी झूट नहीं बोलता।" कोदण्ड ने कहा।

"यदि ऐसा आत्म विश्वास है, तो मूर्ति को उठा लो।" साधु ने कहा।

कोदण्ड आगे आया। उस मूर्ति को छूकर, वह ज़ोर से हँसा। उसके हाथ भी जल गये। वह भी अपमानित हुआ। उसका अपमान जो हुआ, सो हुआ—ग्रामवासी यह न जान सके कि मूर्ति को कौन उठाकर ले जाये।

उस समय कोदण्ड को पन्नालाल याद आया। सबका विश्वास था कि पन्नालाल बड़ा पवित्र था। जब उसने कहा था कि उसने भी झूट बोला था, तो किसी को विश्वास नहीं हुआ था। पन्नालाल की पोल खोलने का यही अच्छा चौका था। पन्नालाल, जिसने उसके सामने सफेद झूट बोला था, यदि मूर्ति छुई तो उसके हाथ अवश्य जलेंगे और उसके बाद, लोग पन्नालाल पर विश्वास न करेंगे।

यह सोचकर कोदण्ड ने कहा—"अरे, भूल हो गई—मूर्ति को ले जाने के लिए एक ही समर्थ है। वह है पास के गाँव में रहनेवाला पन्नालाल। वह बड़ा पुण्यात्मा है। सत्यवादी है।" सब बड़े खुश हुए। हर किसी को पन्नालाल पर विश्वास था।

पन्नालाल को बुलाकर लाने के लिए एक सेवक भेजा गया। उस सेवक के कहने पर, पन्नालाल उसके साथ चला आया। उसने स्नान किया। साधु को नमस्कार किया। मूर्ति को उठाने की अनुमति माँगी।

साधु ने जैसे कोदण्ड से पूछा था, वैसे ही उससे पूछा—"तुमने पुण्य कार्य किये हैं न?"

"मैंने वही काम किये हैं, जो मेरे अन्तरात्मा ने मुझे करने के लिए कहा था, वे पुण्य कार्य हैं कि नहीं, वह तो भगवान ही जानते हैं।" पन्नालाल ने कहा।

"झूट तो नहीं बोलते?" साधु ने फिर पूछा।

"कभी कभी बोलना पड़ जाता है?" पन्नालाल ने कहा।

"अच्छा, तुम में अगर आत्म विश्वास है, तो मूर्ति को उठाओ।" साधु ने कहा।

पन्नालाल ने मूर्ति को नमस्कार करके, मूर्ति को उठा लिया। उसके हाथ नहीं जले। ग्रामवासी जय जयकार करते, उस मूर्ति को ले गये। उसको ग्राम में प्रतिष्ठित किया, इसके बाद जब कभी किसी ने मूर्ति को छुआ, उसके हाथ नहीं जले। सब तो सन्तुष्ट हुए। पर कोदण्ड का मुँह झुलस-सा गया। धीमे-धीमे उसको पन्नालाल में भक्ति-सी पैदा हो गई। वह अपनी गलती जान गया। उसने अपनी माँ के सामने शपथ ली कि वह अपने भाई को ठीक तरह देखेगा। रामलाल पन्नालाल के पास रखवाये हुए पैसे ले आये और उसने उनको अपने भाई के सामने रखा। कोदण्ड ने उन्हें अपने भाई को ही दे दिये।

उत्तरकाण्ड

राम राक्षसों का संहार करके अयोध्या आकर राज्याभिषेक के बाद राज्य करने लगे।

एक दिन चारों दिशाओं से कई मुनि, जिनमें अगस्त्य आदि थे, उनके घर आये। और उन्होंने द्वारपाल से राम के पास खबर भिजवाई कि वे उनसे मिलना चाहते थे। तुरत राम ने उनको अन्दर बुलवाया, उनको उचित आसनों पर बिठाया। उनका कुशल क्षेम पूछा।

मुनियों ने राम को पुनः राजा के रूप में देखकर अपनी प्रसन्नता व्यक्त की। राम का रावण को मारना कोई बड़ी बात न थी। राम के हाथ जो राक्षस मारे गये थे, वे बड़े वीर थे, परन्तु इन्द्रजित जैसे अजेय वीर का, लक्ष्मण के हाथ मारा जाना अत्यन्त आश्चर्यजनक था—उन्होंने कहा।

राम को उनकी बातें सुनकर आश्चर्य हुआ। यह सुनकर कि इन्द्रजित रावण, कुम्भकर्ण, महोदर, प्रहस्त, देवान्तक, नरान्तक आदि राक्षस वीरों से भी अधिक वीर था अगस्त्य ने, इन्द्रजित के प्रभाव और पराक्रम के बारे में यूँ बताना शुरु किया।

कृतयुग में ब्रह्मा का मानसपुत्र, जो द्वितीय ब्रह्मा कहलाने योग्य था—ऐसा

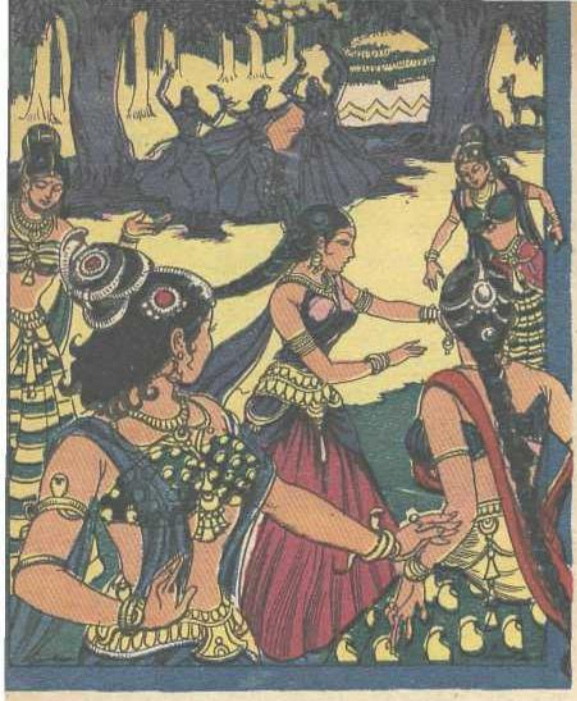

पुलस्त्य, एक बार तपस्या करने के लिए मेरुपर्वत प्रान्त में तृणबिन्दु के आश्रम में गया। जब वह तपस्या कर रहा था, तो रोज़ देव, नाग, राजर्षि कन्यायें खेलकर, शोर शराबा करके उसकी तपस्या में विघ्न करने लगी। उनका गाना बजाना, खेलना कूदना, शोर सुनकर पुलस्त्य इतना ऊब गया कि उसने शाप दिया कि उसके सामने जो स्त्री आयेगी, वह गर्भवती हो जायेगी।

यह शाप सुनकर वे कन्यायें इतनी घबरा गईं कि उन्होंने उस आश्रम में जाना छोड़ दिया।

यह बात तृणबिन्दु की लड़की नहीं जानती थी। वह रोज़ की तरह पुलस्त्य के आश्रम में आयी और अपनी सहेलियों को ढूँढ़ने लगी। एक भी उसे न दिखाई दी। वह सीधे वहाँ गई, जहाँ पुलस्त्य वेदों का अध्ययन कर रहा था, उसको देखते ही उसमें गर्भवती के लक्षण आ गये। उसका सारा शरीर फूल गया। वह अपने शरीर में हुए परिवर्तन को देखकर चकित हो गई। और अपने पिता के आश्रम में गई। "पिता जी....देखो मेरा शरीर किस तरह बदल गया है। मैं जब पुलस्त्य के आश्रम में अपनी सहेलियों को ढूँढ़ने गई तो यह हो गया। कारण तो मुझे मालूम नहीं है। पर मुझे डर लग रहा है।"

तृणबिन्दु जान गया कि पुलस्त्य के शाप के कारण वैसा हुआ था। वह उसको लेकर पुलस्त्य के पास गया।

"महाशय! यह मेरी लड़की है। यह आपको ढूँढ़ती आयी है। आप इसे अपनी स्त्री के रूप में स्वीकार कीजिये और इससे सेवा प्राप्त कीजिये।" तृणबिन्दु ने कहा। पुलस्त्य इसके लिए मान गया।

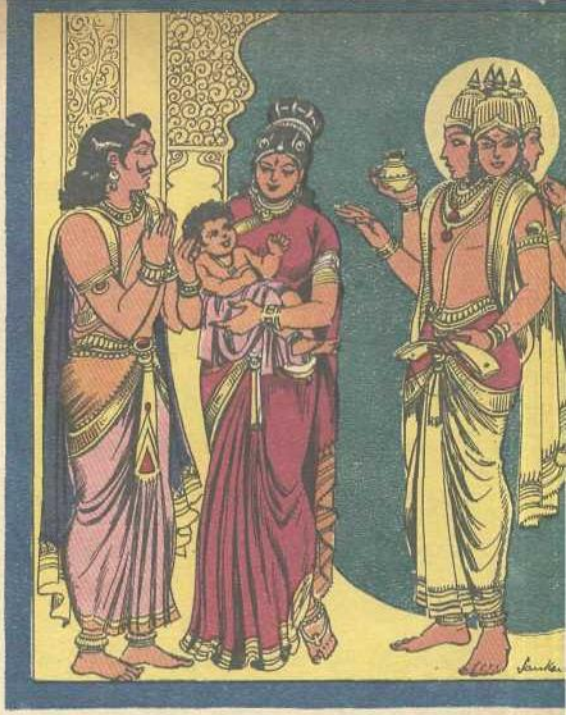

अपनी पत्नी के गुण और व्यवहार को देखकर पुलस्त्य बड़ा सन्तुष्ट हुआ। उसने उससे कहा—"तुम सचमुच बहुत योग्य हो, तुम्हारे गर्भ से मेरे जितना लड़का पैदा होगा। जब मैं वेद पठन कर रहा था, तब तुम गर्भवती हुई इसलिए तुम्हारा लड़का विश्रवसु कहलायेगा। क्योंकि मेरा लड़का है, इसलिए वह पौलस्त्य भी कहलायेगा।"

कुछ दिनों बाद विश्रवसु पैदा हुआ। वह सत्य, शील, शुचिता के लिए प्रसिद्ध हुआ। उसकी कीर्ति सुनकर भरद्वाज महामुनि ने अपनी लड़की देववर्णिनी का उसके साथ विवाह किया। विश्रवसु का उससे एक लड़का हुआ। उस लड़के के पैदा होते ही ब्रह्मा स्वयं आया और उसने कहा कि वह लड़का धनाधिपति होगा। उसको वैश्रवण नाम देकर वह चला गया।

वैश्रवण को बचपन से ही तपस्या अधिक मुख्य लगी। वह महा अरण्य में चला गया। वहाँ जलभक्षण, वायुभक्षण, निराहार दीक्षा करके उसने तीन हज़ार वर्ष कठोर तपस्या की। उसकी तपस्या देख, ब्रह्मा, इन्द्र आदि प्रत्यक्ष हुए। उन्होंने कहा—"हम तुम्हारी तपस्या देखकर बड़े खुश हैं। कोई वर माँगो।"

"मुझे लोक पालन और धनाधिपत्य चाहिए।" वैश्रवण ने कहा।

"मैं भी एक और लोक पालक की सृष्टि करने की सोच रहा था। इन्द्र, यम और वरुण के साथ तुम भी चौथे लोकपालक बनो और निधि आदियों के अधिपति बनो। यह देखो, सूर्य के प्रकाश में चमकनेवाला पुष्पक विमान—इस पर सवार होकर विचरण करो और देवताओं

के समान रहो।" यह कहकर ब्रह्मा, देवताओं को लेकर चला गया।

ब्रह्मा से इस प्रकार वर प्राप्त करके वैश्रवण अपने पिता के आश्रम में आया। "पिताजी, ब्रह्मा ने मुझे वर तो दे दिये हैं, पर मेरे रहने के लिए कहीं कोई जगह नहीं दी। बिना किसी को असुविधा पहुँचाये, कहीं मेरे लिए जगह हो, तो दिलवा दो।"

लड़के की बात सुनकर विश्रवसु बड़ा सन्तुष्ट हुआ। उसने कहा—"बेटा! दक्षिण समुद्र तट पर त्रिकूट पर्वत के शिखर पर विश्वकर्मा ने, देवेन्द्र की अमरावती की तरह लंका नगरी का निर्माण किया है। वह बहुत सुन्दर नगर है। उसके प्राकार सोने के हैं। वैडूर्य आदि के तोरण हैं। वह पहिले राक्षसों के लिए बनाई गई थी। परन्तु विष्णु से डरकर राक्षस उस नगर को छोड़कर पाताल चले गये हैं। वह अब सूनसान है। उसके कोई राजा नहीं है। अगर तुम वहाँ रहे तो किसी को कोई असुविधा न होगी।"

वैश्रवण पिता की सलाह पर, हज़ारों नैऋतियों के साथ लंका नगर गया और

वहाँ रहने लगा। वह वहाँ सुख से राज्य करने लगा। पुष्पक विमान में कभी कभी आकर अपने माँ बाप को वह देख जाया करता था।

यह सुनकर राम ने आश्चर्य से अगस्त्य से पूछा—"महात्मा, मैंने सुना है कि राक्षस पुलस्त वंश में ही पैदा हुए थे, पर आप कह रहे हैं, उससे पहिले भी राक्षस थे। इन राक्षसों का मूल पुरुष कौन है?" तब अंगस्त्य ने उसके बारे में यूँ कहा—

कमल में पैदा हुए ब्रह्मा ने पानी की सृष्टि करके उसकी रक्षा करने के लिए कुछ प्राणियों को बनाया। उन प्राणियों ने भूख, प्यास और भय से छटपटाते हुए ब्रह्मा से पूछा—"हम क्या करें?" ब्रह्मा ने हँसते हुए कहा—"तुम इस जल की रक्षा करो।" कुछ प्राणियों ने कहा कि हम रक्षण करेंगे। कुछ ने कहा, हम जक्षण—(यानि "भक्षण") करेंगे। रक्षण करनेवाले प्राणी राक्षस कहलाये और "जक्षण" करनेवाले यक्ष।

राक्षसों में, हेति और प्रहेति दो भाई थे। उनमें प्रहेति तपस्या करने के लिए चला गया। हेति ने विवाह करने की

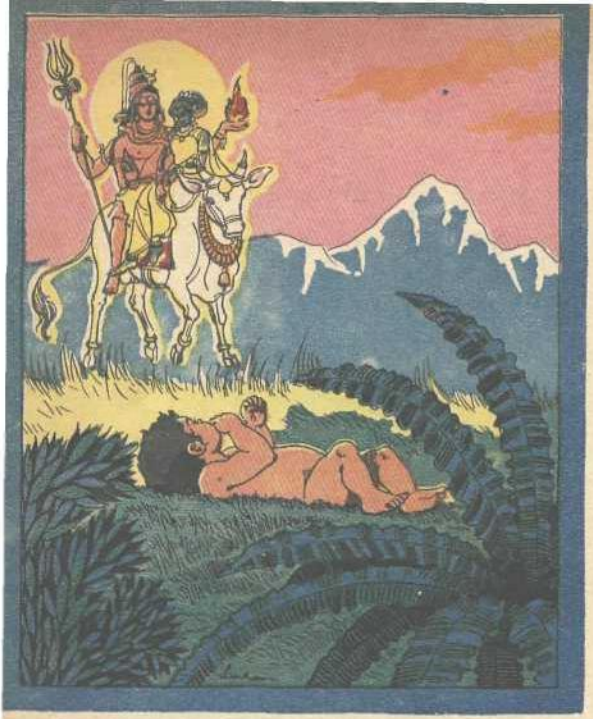

सोची। पत्नी खोजते खोजते उसने आखिर यम की बहिन भय और भयंकर से शादी की।

उनके विद्युत्केश नाम का लड़का, जो सूर्य के समान प्रकाशमान था, बड़ा होने लगा। जब वह बड़ा हुआ तो हेति ने उसके लिए एक पत्नी निश्चित की। वह सन्ध्या की पुत्री थी। उसका नाम सालकटंकट था। सालकटंकट, विद्युत्केश से विवाह करके पति के साथ विहार करती, गर्भवती हुई। उसने मन्दर पर्वत के प्रान्त में एक लड़के को जन्म दिया। चूँकि उसे, उस लड़के की अपेक्षा अपने पति पर अधिक प्रेम था, इसलिए वह अपने लड़के को वहीं छोड़कर पति के साथ विहार करने चली गई।

लड़का मुख में अंगुली रखकर धीमे धीमे रोने लगा। उस समय वृषभ वाहन पर पार्वती ओर परमेश्वर ने आकाश मार्ग में जाते जाते उस लड़के का रोना सुना। उन्हें उस शिशु पर दया आयी। उन्होंने आकर उसे देखा। पार्वती को सन्तुष्ट करने लिए परमेश्वर ने उस लड़के को माँ के समान आयु, चिरंजीवत्व और आकाश में उड़नेवाला एक नगर दिया। पार्वती ने राक्षसों को वर दिया कि वे सद्योगर्भ हो और पैदा होते ही माता की आयु दी।

पार्वती परमेश्वर से इस प्रकार वर प्राप्त करके, सुकेश नाम का राक्षस ऐश्वर्य के साथ रहता, उड़नेवाले नगर में रहता, इन्द्र के समान हो गया।

सुकेश को वर प्राप्त थे और वह धर्मात्मा था, यह सुनकर ग्रामणी नाम के गन्धर्व ने अपनी अत्यन्त सुन्दर पुत्री देववती का सुकेश के साथ विवाह किया।

देववती बड़ी खुश हुई कि उसको इतना गुण सम्पन्न पति मिला था। सुकेश भी अपनी पत्नी को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ।

इनके माल्यवन्त, सुमाली, माली नाम के तीन लड़के हुए। वे बड़े बलशाली, निर्भीक और भयंकर थे। जब उनको मालूम हुआ कि उनके पिता ने शिव से वर प्राप्त किये थे, वे भी मेरु पर्वत में जाकर घोर तपस्या करने लगे। उनकी तपस्या देखकर तीनों लोकों में तहलका मच गया। ब्रह्मा, इन्द्र, आदि देवताओं को साथ लेकर, आया। उसने कहा—"मैं तुम्हारी तपस्या से सन्तुष्ट हूँ। क्या वर चाहिए, माँगो।"

"देव! यदि आपको हम पर अनुग्रह है, तो हमें वर दीजिए कि हमारी कभी पराजय न हो, हमारे हाथ से सब शत्रु मारे जायें और हम चिरंजीवी होकर रहें।" ब्रह्मा उनको वे वर देकर अपने लोक में चला गया।

यह वर पाकर वे तीनों राक्षस तीनों लोकों को सताने लगे। देवताओं, ऋषियों, सिद्धों, चारण, आदियों का जीवन दूभर

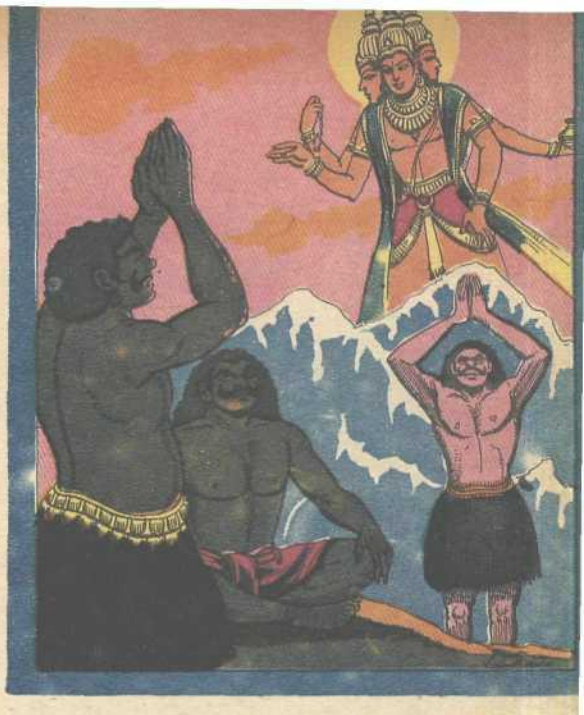

हो गया। उनकी कोई रक्षा करनेवाला न था।

उन राक्षसों ने विश्वकर्मा को बुलाकर कहा—"सुनते हैं कि तुमने ही देवताओं के लिए मकान बनाये थे। या तो हिमालय पर, नहीं तो मेरु पर्वत पर, या मन्दरगिरि पर हमारे लिए कैलाश की तरह एक घर बनाकर दो।"

"दक्षिण समुद्र के तट पर त्रिकूट पर्वत के मध्य के शिखर पर इन्द्र की इच्छा पर मैंने लंका नगर बना रखा है। वह स्वर्ग के समान है। उसके प्राकार व तोरण

सुवर्ण के हैं। यदि तुम अपने राक्षसों के साथ वहाँ रहे, तो कोई भी तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता।" विश्वकर्मा ने उनसे कहा।

विश्वकर्मा की वे बातें सुनकर राक्षस बड़े खुश हुए। कई हज़ार परिवारों को लेकर वे लंका पहुँचे। उस नगर को देखकर बड़े खुश हुए। उसी समय नर्मदा नाम की सुन्दर गन्धर्व स्त्री ने, अपनी तीन सुन्दर लड़कियों का उन तीनों भाइयों से विवाह कर दिया।

बड़े माल्यवन्त की पत्नी सुन्दरी थी। सुन्दरी के वज्रमुष्टि, विरूपाक्ष, दुर्मुख, सुप्तघ्न, यज्ञकोप, मत्त, उन्मत्त, सात लड़के और अनल नाम की एक लड़की हुई।

सुमालि की पत्नी का नाम केतुमति था। सुमालि उसको अपने प्राणों से भी अधिक चाहता था। केतुमति के प्रहस्त, अकम्पन, विकट, कालकर्मक, धूम्राक्ष, दण्ड, सुपार्श्व, संह्रादी, प्रघस, भासकर्ण सड़के, पुष्पोत्कटा, कैकसी, शुचिस्मिता, कुम्भीनसी नाम की लड़कियाँ हुईं। माली की पत्नी वसुधा असाधारण सुन्दर थी। उसके अनिल, अनल, हर, सम्पाति नाम के लड़के हुए। ये चारों विभीषण के मन्त्री बने।

इस प्रकार वे तीनों राक्षस, अपनी सन्तान के साथ, परिवार के साथ लंका में रहते, इन्द्र आदि देवताओं, ऋषि, नाग, दानवों को सताते, चूँकि उनको कोई रोक नहीं सकता था, इसलिए वे तीनों लोकों में निरंकुश हो विचरते। युद्धों में शत्रुओं को जीतते चूँकि उनको मृत्यु का भय न था, इसलिए यज्ञों को भंग करते, अपने वरों के गर्व में, उद्धत हो स्वच्छन्द रहते।

शुम्भ निशुम्भ

आदिकाल में देव और दानवों में युद्ध हुआ। उसमें राक्षस पराजित हुए और वे पाताल में जा छुपे। उस समय शुम्भ और निशुम्भ नाम के दो राक्षस बालकों को वन में छोड़कर, उनके माँ बाप पाताल में भाग गये। वे वनों में घूमने फिरने लगे। जो कोई प्राणी मिलता वे उसे खा लेते। वे यूँ बड़े होते होते बड़े बलशाली हो गये। जो विद्यायें राक्षसों के लिए स्वाभाविक थीं, उनमें भी आ गईं।

वे अपने बल के घमंड़ में चूर थे, उनके लिए चूँकि कुछ भी असाध्य और असम्भव न था, इसलिए वे हमेशा क्रूर कृत्य किया करते। बड़ा शुम्भ तो और भी भयंकर था। उसे यह न मालूम था कि कैसे अपना बल का उपयोग करे, वह बड़े बड़े पर्वतों को पीट पीटकर चूरा कर देता था। उसी तरह जब उसने महेन्द्र पर्वत को, अपने दायें हाथ से मारा, तो उसका हाथ टूटकर गिर गया। हाथ के चले जाने से, शुम्भ का तिहाई बल जाता रहा। वह पहिले की तरह जन्तुओं का शिकार न कर पाता। उसके बल के यूँ चले जाने पर, वह अपने छोटे भाई निशुम्भ के सामने रोया धोया। निशुम्भ ने भाई की दयनीय स्थिति देखकर, टूटे हुए हाथ की हड्डी से एक गदा तैयार करके शुम्भ को दी। शुम्भ ने जब उसको अपने बायें हाथ में लिया, तो उसकी गई हुई शक्ति फिर वापिस आ गई। शुम्भ उससे पहिले की तरह जन्तुओं का शिकार करता निश्चिन्त रहने लगा।

अन्तिम पृष्ठ

शुम्भ और निशुम्भ जिस जंगल में होते वहाँ के जानवर थोड़े समय में ही नष्ट हो जाते। इसलिए वे एक जंगल को छोड़कर दूसरे जंगल में चले जाते। वे इस तरह घूमने फिरने के बाद, उन जंगलों में भी पहुँचे, जहाँ ऋषियों के आश्रम और यज्ञ पशु थे। उन आश्रमों को नष्ट करके वे गौवों को मारकर खाने लगे।

इन राक्षस भाइयों के भय से, कुछ ऋषि अपने आश्रम छोड़कर हिमालय पर्वत की ओर भागने लगे। उनमें से कई नृग महाराजा के पास गये। उससे निवेदन किया कि वे आश्रम और यज्ञ पशुओं को नष्ट करनेवाले शुम्भ और निशुम्भ का नाश करके उनको शान्ति प्रदान करें, नृग महाराजा ने राक्षसों को मार आने के लिए जंगल में एक बड़ी सेना भेजी। सर्वायुध सम्पन्न उस बड़ी सेना ने शुम्भ और निशुम्भ से भयंकर युद्ध किया। पर उन राक्षसों ने उस सेना को हराकर खा पी लिया।

यह परिस्थिति देखकर, नृग महाराज चिन्तित हो उठा। तब ऋषियों ने उसको ढ़ाढ़स देते हुए कहा—"इतने बलवान बहुत समय तक नहीं रहते। जब समय

आ जाता है, तो उनको मारने के लिए एक तिनका काफ़ी है। हम जाकर उन राक्षसों का ध्यान इन्द्र लोक की ओर आकर्षित करेंगे। इस तरह हमें कुछ समय तक शान्ति मिल सकेगी।"

वे ऋषि शुम्भ और निशुम्भ के पास गये। उन्होंने कहा—"तुम जैसे बलशालियों को, भूमि पर अपना प्रताप दिखाना नहीं शोभता। देखा न! महाराज कितनी आसानी से पराजित कर दिया गया था। हम जैसे ऋषियों को सताकर भी तुम क्या सुख पाओगे? सब सुखों का स्रोत इन्द्र लोक है। वहाँ जाकर यदि तुमने इन्द्र पर अपना बल आजमाया और उसे जीत लिया, तो तुम्हें स्वर्ग के सब सुख मिलेंगे।"

यह बात निशुम्भ को खूब जँची। "सच है। इस संसार में हमारा प्रताप दिखाने के लिए कुछ भी तो नहीं है। हमारा सचमुच शत्रु इन्द्र ही है। उसने हमारे पूर्वजों को हराकर, पाताल में भगा दिया था। उसने ही हमारी हानि की थी। उसे अपनी गदा से चूर्ण करके हम अपना बदला ले लें।"

छोटे भाई की बात पर शुम्भ कुछ डरा। उसने कहा—"इन्द्र को जीतना

कोई मामूली बात नहीं है। घोर तपस्या करके, बिना बड़े बड़े वरों को पाये, इन्द्र पर हमला नहीं कर सकते। यही नहीं, उसके पास प्रचण्ड वज्र है, उसकी चोट का हम मुकाबला नहीं कर सकते। हम निश्चिन्त इस जंगल में जी रहे हैं। क्यों फिजूल आफत मोल लेते हो?"

"अरे तुम इतने डरपोक कब से हो गये? यदि तुम्हें इतना भय है, तो तुम अपनी गदा मुझे दे दो, मैं जाकर उस इन्द्र को मार आऊँगा।" निशुम्भ ने कहा। बड़े भाई के बहुत कहने पर भी उसने न सुना। वह अपने भाई की गदा लेकर, देवलोक की ओर चल पड़ा।

वह सीधे स्वर्ग गया। वहाँ उसने गदा से, वहाँ के पहरेदारों को भगा दिया, जैसे वे मक्खियाँ हों। वे डर गये। उन्होंने जाकर इन्द्र से शिकायत की। इन्द्र ने वज्र से एक चोट मारी। उस चोट से निशुम्भ की गदा चूर चूर हो गई और हवा में उड़ गई। उस चोट से निशुम्भ नीचे भूलोक में आ गिरा।

उसकी बात सुन, निशुम्भ जाकर, अपमानित होकर आया था, इसलिए शुम्भ को उस पर बड़ा गुस्सा आया—"तुम्हारा अपमान जो हुआ सो हुआ, तुम मेरे जीवन के आधार गदा को भी खो बैठे। उसके बगैर मैं अपना पेट कैसे भरूँगा। अब से, तुम्हें ही मेरेलिए भी शिकार करना होगा और मेरी देखभाल करनी होगी।" शुम्भ ने कहा। वह यह भी भूल गया कि मूर्खतावश वह ही अपना हाथ खो बैठा था और निशुम्भ ने ही उसे एक गदा तैय्यार करके दी थी। [अगले अंक में समाप्त]

४५. दक्षिणी ध्रुव में ज्वालामुखी

एरिबस नाम का यह ज्वालामुखी रास द्वीप में है। इसकी ऊचाई १३,२०० है। इसके मुख का व्यास करीब आधा मील है और गहराई ९०० फीट। अन्टार्कटिक क्षेत्र में, सिवाय इसके कोई और ज्वालामुखी कहीं नहीं दिखाई देता।